स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–21, अंक–4, चैत्र–वैशाख 2070, अप्रैल 2013

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी
दिल्ली–110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

आवरण कथा–4

इस मुकदमें पर दुनिया भर की निगाहें टिकी हुई थी। यदि नोवार्टिस कंपनी भारत सरकार से यह मुकदमा जीत जाती तो नोवार्टिस ही नहीं बल्कि सभी भारतीय और विदेशी कंपनियों के पास यह अधिकार . . . .

कवर पेज

अनुक्रम

आवरण कथा
स्वदेशी की नोवार्टिस कंपनी के खिलाफ बड़ी जीत
– डॉ. अश्विनी महाजन /4

सामयिकी
कैंसर रोगियों को राहत
– निरंकार सिंह /7

एफडीआई
खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश के दूरगामी घातक परिणाम
– डॉ. सूर्य प्रकाश अग्रवाल /10

मंथन
स्वामी विवेकानंद की दृष्टि में ग्लोबलाइजेशन
– डॉ. भरतझुनझुनवाला /13

लेख
विवेकानंद का अर्थ और प्रबंध चिंतन
– डॉ. जय प्रकाश मिश्र /15

समीक्षा
खाद्य सुरक्षा की छतरी में छेद
– जयंतीलाल भंडारी /18

पर्यावरण
आखिर कैसे होगी गंगा–यमुना. . .
– भारत डोगरा /20

मुद्दा
गंगा चिंतन – विमल भाई /23

विचार–विमर्श
अभिशाप न बने इंटरनेट का वरदान
– पंकज चतुर्वेदी /25

संस्कृति
भारतीय काल गणना का वैज्ञानिक आधार
– डॉ. नन्द सिंह नरूका /27

दृष्टिकोण
एशिया के उदय पर ग्रहण
– ब्रह्म चेलानी /30

शिक्षा
यह शिक्षा मिल भी जाए तो. . .
– जवाहरलाल कौल /32

पाठकनामा/2, रपट/34

पाठकनामा

कब तक चुप बैठेगी जनता

देश को आजाद हुए 65 वर्ष हो चुके है और आज भी हम अंग्रेजों की नीतियां को थोड़ा बहुत परिवर्तनों के साथ उसे कायम किए हुए है। अंग्रेजों ने देश में राज चलाने के लिए बांटो और राज करो की नीति अपनाई थी और अब खैरात बांटो और राज करो की नीति को अपनाया जा रहा है। आज सभी पार्टियां का मूल मंत्र हो गया है कि चुनाव के समय जनता से बड़ी–बड़ी बातें की जाती है जैसे हम आएंगे तो किसान कर्ज माफी होगा या महिलाओं को सुरक्षा देंगे, बेरोजगारों को बेरोजगारी भत्ता देंगे, गैर सरकारी संगठनों की मदद करेंगे, बच्चों को लैपटाप, टेबलेट और जन कल्याण के नाम पर कई सुविधा देंगे। शासन के आने पर इन्हीं सब चीजों के नाम पर बड़े–बड़े घोटाले होते हैं। जहां नेता का काम होता है कि जनता को खैरात में न देकर जनता को स्वालंबन बनाए लेकिन हर बार जनता को गुमराह किया जाता है। आजादी के बाद अब तक न तो गरीबी कम हुई है और न बेरोजगारी। बच्चों की शिक्षा में भी नेताओं ने अंतर पैदा कर दिया है – जैसे प्राइवेट स्कूल और सरकारी स्कूल। आज देश में खैरात बांटने का जैसा धंधा ही चलने लगा है कभी शिक्षा के नाम पर, कभी विकास के नाम और कभी किसी अन्य चीजों के नाम पर। नेताओं को ऐसी नीति बनानी चाहिए जिससे जनता की समस्याओं का हल हो सके न की समस्या जस की तस बनी रहे। जनता को वोट देकर चुप नहीं बैठना चाहिए। लोकतंत्र के हिसाब से वोट देने के बाद भी जनता को हर उस क्षेत्र में आवाज उठनी चाहिए जहां उसे भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, जनसंख्या समस्या, शिक्षा और तमाम ऐसी चीजें हैं जिन चीजों पर जनता को एकत्रित होकर अपने नेताओं द्वारा इसे दूर कर सकती है। अगर जनता चुप बैठती है तो उसे कभी आर्थिक सुधार, कभी जन–कल्याण के नाम पर इसी तरह ठगा जाएगा।

जयवीर सिंह रावत, एन–118, सेक्टर–12, नौएडा

अभी भी दूर है हर बच्चे से शिक्षा

इस वर्ष हम स्वामी विवेकानंद की 150वीं जन्म शताब्दी मना रहे हैं। विवेकानंद जी ने कहा था अगर देश से गरीबी दूर करनी है तो शिक्षा का विकास करना चाहिए। परंतु देश के नेताओं ने शिक्षा को भी बांट कर रख दिया है – प्राइवेट सेक्टर और सरकारी सेक्टर। सरकारी अध्यापक पढ़ाने को तैयार नहीं तो दूसरी तरफ प्राइवेट सेक्टरों में शिक्षा कानून के तहत 25 प्रतिशत जिन गरीबों को शिक्षा मिलनी चाहिए थी उन्हें अब भी मिलती नहीं। इसमें दोष प्राइवेट सेक्टर का नहीं बल्कि गरीबी के नाम पर जो प्रूफ बनाया जाता है वहां भी भ्रष्टाचार होने के कारण संपन्न लोग ही इसका फायदा उठा रहे हैं। एक तरफ से देखा जाए दोष इसमें सरकारी प्रणालियों का ही है जब तक सरकारी कर्मचारी आदर्श पुरुषों के विचारों पर नहीं चलेंगे तब तक देश का विकास कभी नहीं हो सकता है। नेता, अफसर और सरकारी कर्मचारी खुद को जनता का सेवक समझें न कि जनता का शोषण करना। अगर सचमुच में देश को आगे बढ़ाना है तो हमें आदर्श पुरुषों के भाषण केवल सुनना ही नहीं है बल्कि अनुसरण भी करना चाहिए।

– वचस्पति मामगेन, मकान नं. 765, सेक्टर–3, आर.के. पुरम्, नई दिल्ली

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 150 रुपए

आजीवन सदस्यता शुल्कः 15,00 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

या आप सीधे बैंक ऑफ इंडिया, खाता नं. 602510110002740

IFSC : BKID 0006025 (Ramakrishnapuram)

उन्होंने कहा

आज स्वावलम्बी आर्थिक विकास के लिए, वैकल्पिक आर्थिक पुनर्रचना की पहल की अविलम्ब आवश्यकता है।

– भय्या जी जोशी

संप्रग सरकार ने देश का भरोसा खो दिया है, वह कैलेंडर नहीं बल्कि घड़ी देखकर चल रही है और कभी भी गिर सकती है।

– नरेन्द्र मोदी

मेरे अनशन रखने से कुछ हुआ हो या न हुआ हो, अब इतना तय हो गया है कि देश की राजनीति अंबानियों के हिसाब से नहीं, बल्कि आम आदमी के हिसाब से चलेगी।

– अरविन्द केजरीवाल

चीन का नव वर्ष अंतर्राष्ट्रीय पर्व हो जाता है, पर भारत अपने नूतन वर्ष को भुलाता जा रहा है। जबकि हम गणित और खगोल शास्त्र में अग्रणी हैं और हमारे महीनों के नाम तक की एक व्यवस्था है।

– श्री श्री रविशंकर

पिछले साल श्वेत–पत्र लाने के बाद सरकार ने विदेष से काला धन वापस लाने के मसले पर चुप्पी साध ली है, जबकि छोटे–छोटे देश भी काला धन स्वदेष वापस लाने में सफल रहे हैं।

– लालकृष्ण आडवाणी

स्वदेशी दुनिया के देशों के साथ मिलकर लड़ने वाला सिद्धांत है यह दुनिया से अलग सिद्धांत नही है। दुनियां के 202 देशों के 99 प्रतिशत लोगों की लड़ाई लड़ने वाला संगठन है स्वदेशी।

– कश्मीरी लाल जी (स्व.जा.म)

संपादकीय

देशहित पर हावी चुनावी स्टंट

देश की अर्थव्यवस्था चरमरा रही है, उद्योग धंधे बंद हो रहे हैं, योजनागत खर्चे सरकार कम करती जा रही है। भुगतान संतुलन पूरी तरह गड़बड़ा गया है। स्थिति 1991 से भी बदतर हो गई है। विदेशी भुगतान घाटा जो 1990–91 में भी जीडीपी का 3. 3 प्रतिशत ही था, अक्टूबर से दिसम्बर 2012 की तिमाही में बढ़कर जीडीपी के 6. 7 प्रतिशत तक पहुंच गया है। उधर सरकार के आर्थिक कुप्रबंधन के चलते जनता महंगाई के बोझ में दबती जा रही है। औद्योगिक उत्पादन में ग्रोथ पिछले लगभग दो वर्षों से औसत एक प्रतिशत तक पहुंच चुकी है। सरकारी खजाना खाली है। फिर भी चुनाव के वर्ष में सरकार जनता को भुलावे में रखने के लिए खाद्य सुरक्षा बिल ला रही है। कांग्रेस के लोग इस विधेयक को 'गेम चेंजर' बता रहे हैं। वित्त मंत्री पी चिदंबरम जैसे वरिष्ठ मंत्री कहते हैं कि कांग्रेस ने यूपीए प्रथम और यूपीए द्वितीय सरकार का कार्यकाल मनरेगा के भरोसे पूरा कर लिया और अब तीसरा चुनाव खाद्य सुरक्षा विधेयक के नाम पर जीत जाएंगे। भूख को 'गेम' बनाने का कांग्रेस का तरीका देश के लिए बहुत महंगा पड़ने वाला है। यह खुला सत्य है कि देश में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता कम होती जा रही है। प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता 1990–91 में 510 ग्राम से घटकर मात्र 430 ग्राम ही रह गई है। ऐसे में 65 फीसदी आबादी को अनाज देने की गारंटी का मतलब होगा आयात का मुंह खोलना। बड़ी मुश्किल से देश खाद्यान्न आयात की निर्भरता से उबर पाया है, पर एक बार फिर सरकार खाद्यान्नों के आयात के जरिए कुछ लोग को मालामाल करना चाहती है। यूपीए के शासन में पहले भी गेंहू खरीद घोटाले, चीनी घोटाले और खाद घोटाले हो चुके हैं। कई वरिष्ठ यूपीए नेता और उनके नातेदार रिश्तेदार आरोपित हो चुके हैं। हालांकि देश के उस वर्ग के लिए खाद्यान्न सुनिश्चित करने की बहुत आवश्यकता है। 21 वीं सदी में भी यदि लोग भूखे पेट सोए तो किसी भी देश के लिए शर्मनाक स्थिति है। पर उनके नाम पर सिर्फ घोषणाएं बेमानी सिद्ध होंगी। क्योंकि अभी तक खाद्य सुरक्षा बिल का जो प्रारूप सामने आया है उससे तो यही लगता है कि सरकार मौजूदा सली गड़ी जन वितरण प्रणाली के जरिए ही भूखी जनता के लिए खाद्य की सुरक्षा मुहैया कराना चाहती है। यानी उस व्यवस्था के भरोसे सरकार देश की 65 फीसदी आबादी की खाद्य सुरक्षा छोडना चाहती है, जो खुद बीमार है। एक बार नहीं कई बार ऐसी संसदीय रिपोर्ट आ चुकी है, जिसमें कहा गया है कि देश भर में लागू जन वितरण प्रणाली पूरी तरह भ्रष्टाचारियों के चंगुल में है, और इस पर काला बाजारियों का पूरा कब्जा है। कांग्रेस खाद्य सुरक्षा विधेयक का वही हश्र करना चाहती है, जो वह मनरेगा का कर चुकी है। गांवों के नाम पर लाखों करोड़ खर्च किए जाने के बाद भी न तो ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर ज्यादा बढ़ पाए। हां मनरेगा राजनीति का अखाड़ा जरूर बन गया। प्रधानमंत्री और अन्य मंत्रीगण गैरकांग्रेसी सरकार वाले राज्यों में जाकर दावा करते हैं कि उनकी सरकार उन राज्यों में पैसा भेज रही है। अब तो वे यह कहना शुरू हुए हैं कि वे लोगों को नकद भिजवा रहे हैं। उत्तरप्रदेश के विधानसभा चुनाव में खुद राहुल गांधी ने यह जुमला उछाला कि मनरेगा का पैसा हाथी खा गया। जर्जर अर्थव्यवस्था के दिनों में वर्तमान सरकार चुनाव को ध्यान में रखकर फिर गरीब जनता का मजाक बनाने के लिए खाद्य सुरक्षा बिल का मुद्दा उछाल रही है।

भूमि अधिग्रहण विधेयक भी राजनीति का बड़ा मुद्दा बनने वाला है। पूरे देश के किसानों की भूमि कुछ लोगों के हाथों में जिस तरह से जा रही है, उससे देश में अघोषित नए जमींदार पैदा होते जा रहे हैं। जैसे जैसे किसान भूमिहीन होते जा रहे हैं, वैसे वैसे सामाजिक विघटन भी हो रहा है। देश में खाद्यान्न का संकट तो पैदा हो ही रहा है, साथ साथ बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार और काले धन का उपयोग हो रहा है। किसानों से कभी उद्योग के नाम पर तो कभी नगरीय अवस्थापना के नाम पर। कभी नहर या बांध के नाम पर तो कभी एसईजेड के नाम पर उनकी जमीनें छीनी जा रही हैं और उद्योगपतियों व कारपोरेट घरानों को सौंपी जा रही हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस काम में राजनीतिक लोग भी पूरी तरह लगे हैं। हमारी संस्कृति में भूमि को मॉ का दर्जा दिया गया है, पर सरकार की गलत नीतियों के कारण किसान अपनी भूमि छोड़ने पर मजबूर हो रहे हैं। हालांकि इस विधेयक को लाने के पहले सरकार एक आम सहमति बनाने का प्रयास करती हुई दिखाई दे रही है, पर चूंकि भूमि राज्यों का विषय क्षेत्र है, इसलिए इस मामले में पूरे देश के मुख्यमंत्रियों की भी राय या सहमति जरूरी होनी चाहिए। कोई भी नीति बने, यह तो सुनिश्चित होना ही चाहिए कि किसानों से उनकी अनुमति के बनाना, उनकी जमीन न ली जाए। जमीन का मालिकाना हक यदि किसान के पास ही रहे तो वो सबसे उत्तम विकल्प होगा।

भारतीय जनता पार्टी द्वारा दिया गया यह सुझाव कि किसान की भूमि को अधिग्रहित करने के बजाय, जिस उद्देश्य के लिए उसे लिया जा रहा है, उसी उद्देश्य से उसकी भूमि को लीज पर लिया जाए, भूमि का किराया किसान को मिले और समय के साथ वो किराया भी बढ़ता जाए। यदि प्रस्तावित उद्देश्य समाप्त हो जाए तो किसान को उसकी जमीन वापिस कर दी जाए। इस मामले में देश के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ले अपनी यह राय दी है कि बिना किसी उचित कारण के किसानों की जमीन न ली जाए या कुछ कॉरपोरेट घरानों के फायदे के लिए जमीन का भू उपयोग ना बदला जाएं। सरकार में शामिल दलों के अतिरिक्त विपक्षी दलों को भी इसमें अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए, यह समय की मांग है।

आवरण कथा

स्वदेशी की नोवार्टिस कंपनी के खिलाफ बड़ी जीत

यह मुकदमा मात्र 'ग्लीवैक'/ 'इमैटिनिब' के पेटेंट अधिकार का नहीं था। इस मुकदमें पर दुनिया भर की निगाहें टिकी हुई थी। यदि नोवार्टिस कंपनी भारत सरकार से यह मुकदमा जीत जाती तो नोवार्टिस ही नहीं बल्कि सभी भारतीय और विदेशी कंपनियों के पास यह अधिकार आ जाता कि वे अपनी पुरानी दवाओं में हल्का–फुलका बदलाव करते हुए उसे नई दवा के नाते पेटेंटयुक्त करा सके। इसके चलते पहले से उस दवा को बनाने वाली अन्य कंपनियां उस दवा को बनाने के लिए अयोग्य घोषित हो जाती और इस प्रकार से उन तमाम दवाओं पर पेटेंट प्राप्त करने वाली उन कंपनियों का एकाधिकार हो जाता।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

स्विटजरलैंड की एक दवा कंपनी नोवार्टिस और भारत सरकार के बीच सुप्रीम कोर्ट में एक मुकदमा चल रहा था, जिसका फैसला 1 अप्रैल 2013 को सुनाया गया। इस मामले में स्वदेशी जागरण मंच की महत्वपूर्ण भूमिका के संदर्भ में मंच द्वारा हस्तक्षेप का निवेदन किया गया और उसे स्वीकार करते हुए स्वदेशी जागरण मंच के पक्ष को सुप्रीम कोर्ट द्वारा गंभीरता से सुना गया।

फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने नोवार्टिस कंपनी के दावे को खारिज कर दिया। मुकदमें में नॉवरेतिस कंपनी का कहना था कि भारत सरकार उसकी एक दवा 'ग्लीवैक' के लिए पेटेंट प्रदान नहीं कर रही। इसके चलते यह कंपनी अपनी बनाई हुई दवा पर एकाधिकार नहीं रख सकती। कंपनी का कहना था कि यह विषय उसके लिए इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि पेटेंट न होने पर उसके द्वारा दवा के शोध और विकास पर किया गया खर्च वसूल नहीं हो सकेगा। नोवार्टिस कंपनी ने पहली बार वर्ष 2006 में भारत सरकार के खिलाफ अपनी इस दवा जिसका नाम उसने 'इमैटिनिब' रखा है, को पेटेंट देने से मना कर दिया था। भारत सरकार का यह कहना था कि इस दवा को बनाने में कंपनी ने कोई नया तत्व इजाद नहीं किया और पहले से बनी दवा में मात्र कुछ परिवर्तन किए हैं। भारत के पेटेंट कानून के प्रावधान 3–डी के अनुसार पुरानी दवा में मात्र कुछ हल्के बदलाव करके कोई कंपनी नया पेटेंट प्राप्त नहीं कर सकती। इसलिए भारत सरकार ने इस दवा के लिए पेटेंट प्रदान न करके कोई गलती नहीं की है।

नोवार्टिस कंपनी ने पहली बार वर्ष 2006 में भारत सरकार के खिलाफ अपनी इस दवा जिसका नाम उसने 'इमैटिनिब' रखा है, को पेटेंट देने से मना कर दिया था। भारत सरकार का यह कहना था कि इस दवा को बनाने में कंपनी ने कोई नया तत्व इजाद नहीं किया और पहले से बनी दवा में मात्र कुछ परिवर्तन किए हैं। भारत के पेटेंट कानून के प्रावधान 3–डी के अनुसार पुरानी दवा में मात्र कुछ हल्के बदलाव करके कोई कंपनी नया पेटेंट प्राप्त नहीं कर सकती।

सबसे पहले मद्रास हाई कोर्ट ने इस मुकदमें में यह फैसला दिया था कि भारत सरकार का कंपनी की इस दवा पर पेटेंट नहीं देना सही कदम है।

गौरतलब है कि वर्ष 2003 में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के दबाव में भारत के पेटेंट कानून में एक्सक्लूसिव मार्केटिंग

- सर्वोच्च अदालत के फैसले से स्थानीय दवा कंपनियों को तो संरक्षण मिलेगा ही, दूसरी बहुराष्ट्रीय दवा कंपनियों पर भी इसका असर पड़ेगा, जिससे बहुत संभव है कि आने वाले समय में अन्य जीवन रक्षक दवाएं सस्ती कीमतों पर उपलब्ध हो सकेंगी।
- फैसले से दुनिया के गरीब मरीजों को मिलेगी भारतीय कंपनियों से बनी सस्ती जेनरिक दवाएं।
- भारतीय दवाई कंपनियां विकासशील देशों में 90 प्रतिशत दवाओं का निर्यात करती है।
- भारत 14वां सबसे बड़ा दवा बाजार है। साथ ही इसमें 14 प्रतिशत की तेजी से इसमें बढ़ोतरी भी हो रही है।
- भारतीय कंपनियों की ग्लीवेक दवा की कीमत आठ हजार रुपए थी जबकि नोवार्टिस ग्लीवेक दवा की कीमत 1.20 लाख रुपए थी।

राइट्स (ईएमआर) के नाम से एक प्रावधान जोड़ा गया था। इस प्रावधान के अनुसार किसी भी पेटेंट धारा कंपनी को अपने उस उत्पाद को भारत में बेचने का एकाधिकार प्राप्त हो गया। ऐसे में नोवार्टिस कंपनी के पास अपनी इस 'इमैटिनिब' दवा का पेटेंट होने के कारण उसे इसका ईएमआर प्राप्त हो गया। इसके आधार पर मद्रास हाई कोर्ट ने अन्य उन सब कंपनियों की इस दवा के उत्पादन को प्रतिबंधित कर दिया। उस समय वर्ष 2004 में स्वदेशी जागरण मंच ने भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय को एक पत्र लिखकर मांग की थी कि इस दवा के ईएमआर को खारिज किया जाए। स्वदेशी जागरण मंच सहित कई विशेषज्ञों और जन संगठनों ने भारत सरकार पर यह दबाव बनाया कि मात्र हल्के फुल्के परिवर्तन कर पहले से समाप्त पेटेंट अवधि वाले उत्पादों पर पुनः पेटेंट देने का प्रावधान समाप्त हो और इस हेतु कानून में आवश्यक प्रावधान किए जाएं।

ऐसे जुड़ी धारा 3डी

डब्ल्यूटीओ के समझौतों के मद्देनजर जब भारत सरकार पेटेंट कानूनों में बदलाव कर रही थी, तो प्रस्तावित विधेयक में धारा 3डी के प्रावधान नहीं थे। यानि यदि भारत सरकार द्वारा पूर्व में प्रस्तावित विधेयक कानून बन जाता तो नॉवरेतिस कंपनी अपने पेटेंट के झूठे दावे को पहले ही मनवा लेती और अन्य कंपनियों भी झूठे दावों के आधार पर अपने पुरानी दवाओं को दुबारा–दुबारा पेटेंट करवा लेती। लेकिन स्वदेशी जागरण मंच सहित कई विशेषज्ञों और जन संगठनों के दबाव में धारा 3डी को पेटेंट अध्यादेश में जोड़ दिया गया और बाद में वह संसद में भी पारित हो गया और यह देश के ही नहीं दुनिया के जन स्वास्थ्य के लिए एक महत्वपूर्ण कानून बन गया।

देश की आजादी के बाद सभी संबंद्ध पक्षों से विचार विमर्श और देशव्यापी चर्चाओं के आधार पर एक पेटेंट कानून बनाया गया, जो था भारतीय पेटेंट अधिनियम, 1970।

गौरतलब है कि इस पेटेंट कानून के आधार पर देश में दवा उद्योग का विकास बहुत तेजी से हुआ। अनिवार्य लाइसेंसिंग और प्रोसेस पेटेंट व्यवस्था और पेटेंट की लघु अवधि, इस पेटेंट कानून की कुछ खास बातें थी। देश में दवा उद्योग का इस कदर विकास हुआ कि भारत दवाओं के क्षेत्र में दुनिया का सिरमौर देश बन गया। भारत इस बात पर गर्व कर सकता है कि भारत में एलोपैथिक दवाईयां दुनिया में सबसे सस्ती है।

भारत का दवा उद्योग केवल देष के लोगों के लिए ही दवा उपलब्ध नहीं कराता बल्कि दुनिया के अधिकतम विकासषील देष भी अपनी दवा की आवष्यकताओं के लिए भारत पर निर्भर करते है। भारत दुनिया का मूल्य की दृष्टि से चौथा और मात्रा की दृष्टि से तीसरा सबसे बड़ा दवा उत्पादक देष है। आज भारत 200 से अधिक देषों को दवा निर्यात करता है और वैष्विक स्तर की सस्ती जैनरिक दवायें दुनिया को भेजता है।

भारत द्वारा विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) के समझौतों पर हस्ताक्षर करने के बाद, उसकी शर्तों के अनुसार देश के पेटेंट कानून में 1 जनवरी 2005 से संशोधन किये गये। उसके बाद देश का पेटेंट कानून काफी हद तक बदल गया। प्रक्रिया (प्रोसेस) पेटेंट के बजाय अब उत्पाद (प्रोडक्ट) पेटेंट व्यवस्था लागू कर दी गई, सरकार द्वारा अनिवार्य लाइसेंस दिये जाने के अधिकार पर अंकुश लगा दिया गया और पेटेंट की अवधि को बढ़ा दिया गया। देश के जन स्वास्थ्य पर संभावित खतरों के मद्देनजर, सरकार द्वारा पेटेंट व्यवस्था को बदलने के विरोध में जन आन्दोलनों और विशेषज्ञों के भारी विरोध के कारण पेटेंट कानून में किये जा रहे कई संशोधनों को सरकार को वापिस लेना पड़ा। सरकार को नए संशोधनों के लागू होने से पहले पेटेंटयुक्त दवाओं के उत्पादन के लिए पूर्व में दिये गये लाइसेंसों

- असल में यह एक बड़ा खेल है, जिसे दिग्गज बहुराष्ट्रीय कंपनियां पहले से मौजूद दवाओं में मामूली फेरबदल कर या फिर उनका नाम बदलकर अंजाम देती हैं। जिस ग्लीवैक के पेंटेट के लिए दावा किया जा रहा था, वह किसी नए फॉर्मूले से नहीं बनी है, बल्कि 15 वर्ष पूर्व बाजार में उतारी जा चुकी दवा का ही नया रूप है।
- दवा की मांग का अंदाजा इससे ही लगाया जा सकता है कि नोवार्टिस दुनियाभर में चार अरब डॉलर की ग्लीवैक दवा बेच डालती है।
- असल में विकसित देशों के बाजार में मंदी के कारण बहुराष्ट्रीय दवा कंपनियों की नजर भारत सहित विकासशील देशों पर टिकी है। साथ ही, भारत विकासशील देशों में सस्ती दवाएं उपलब्ध कराने वाला बड़ा जरिया है, जिसे पश्चिम की कंपनियां पचा नहीं पातीं।

को जारी रखना पड़ा और ऐसे प्रावधान बनाए गए, जिससे अंतर्राष्ट्रीय दवा कंपनियां अपनी दवाओं में छोटामोटा बदलाव करके नये पेटेंट न ले सके। इसका अभिप्राय यह है कि दवाओं के पेटेंट को कंपनियां सदाबहार (एवरग्रीन) नहीं कर सकती।

नोवार्टिस बनाम भारत सरकार मुकदमे के मायने

भारत में कई अन्य कंपनियां 'ग्लीवैक' नामक इस दवा को बनाती हैं। यह दवा बल्ड कैंसर के मरीजों के लिए अत्यधिक कारगर दवा है। ऐसा माना जाता है कि देश में हर वर्ष बल्ड कैंसर के 20 हजार नये मरीज बनते हैं। **नोवार्टिस** कंपनी अपनी बनाई गई इस दवा के लिए लगभग 1 लाख 20 हजार रूपये प्रतिमाह वसूलती है। जबकि यही दवा भारतीय कंपनियों द्वारा मात्र 8 से 10 हजार रूपये प्रतिमाह की कीमत पर बेची जाती है। यदि इस दवा के उत्पादन पर किसी एक कंपनी का एकाधिकार हो जाता तो गरीब मरीजों द्वारा दवा नहीं खरीद सकने के कारण उन्हें मौत की नींद सोना पड़ सकता था।

यह मुकदमा मात्र 'ग्लीवैक'/'इमैटिनिब' के पेटेंट अधिकार का नहीं था। इस मुकदमें पर दुनिया भर की निगाहें टिकी हुई थी। यदि नोवार्टिस कंपनी भारत सरकार से यह मुकदमा जीत जाती तो नोवार्टिस ही नहीं बल्कि सभी भारतीय और विदेशी कंपनियों के पास यह अधिकार आ जाता कि वे अपनी पुरानी दवाओं में हल्का–फुलका बदलाव करते हुए उसे नई दवा के नाते पेटेंटयुक्त करा सके। इसके चलते पहले से उस दवा को बनाने वाली अन्य कंपनियां उस दवा को बनाने के लिए अयोग्य घोषित हो जाती और इस प्रकार से उन तमाम दवाओं पर पेटेंट प्राप्त करने वाली उन कंपनियों का एकाधिकार हो जाता।

आज भारत दुनिया को सस्ती जैनरिक दवाईयां बनाकर बेच रहा है और दुनिया भर के लगभग 200 देश भारत से दवाएं आयात करके अपने जन स्वास्थ्य की रक्षा कर रहे हैं। कंपनियों के लाभों के सामने दुनिया भर के गरीब मरीजों के लिए अपने स्वास्थ्य की रक्षा के रास्ते बंद हो सकते थे।

इस मुकदमे के मद्देनज़र नोवार्टिस के इस मुकदमें के खिलाफ दुनिया भर में एक मुहिम छिड़ी हुई थी और स्थान–स्थान पर कैपचर नोवार्टिस के नाम पर चल रहे इस आंदोलन के तहत नोवार्टिस के कार्यालयों पर प्रदर्शनकारियों ने कई बार अपना कब्जा भी जमाया। दुनिया भर के जन स्वास्थ्य की रक्षा हेतु बने संगठन इस मुकदमें के मद्देनजर भारत सरकार पर नोवार्टिस के सामने न झुकने के लिए दबाव भी बना रहे थे। इन संगठनों की यह मांग थी कि किसी भी हालत में इस मुकदमें को हल्के से न लिया जाए और भारत सरकार सुप्रीम कोर्ट में इस मुकदमें की पैरवी के लिए भारत सरकार के शीर्ष वकील को भेजे।

यह फैसला गंभीर बीमारी से पीड़ित मरीजों के लिए राहत लेकर आया है। अब सिपला, रेनबैक्सी व नाटको जैसी भारतीय कंपनियां नोवार्टिस के उत्पाद की तुलना में बेहद कम दाम पर दवा उपलब्ध करा सकेगी।

– डीजी शाह, महासचिव इंडियन फार्मास्युटिकल एलायंस

हमारे देश में विदेशी निवेश को बढ़ावा देने के लिए विदेशी कंपनियों को विभिन्न प्रकार से तरजीह देने का एक फैशन से हो गया है, चाहे वह जन स्वास्थ्य की कीमत पर ही क्यों न हो। इसका जीता–जागता उदाहरण यह है कि विदेशी कंपनियां येन–केन–प्रकारेण भारतीय दवा कंपनियों का अधिग्रहण करती जा रही हैं, और भारत सरकार इसे रोकने के लिए कोई उपाय नहीं कर रही। यह कंपनियां काटेल बनाकर दवाईयां और महंगी कर सकती हैं। सुप्रीम कोर्ट का नोवार्टिस के खिलाफ यह फैसला बड़ी दवा कंपनियों की जनता को पेटेंट के नाम पर लूटने की प्रवृत्ति पर रोक लगाने में मील का पत्थर साबित होगा। ❑

दवा के नाम पर लूट

कैंसर रोगियों को राहत

दरअसल में यह एक बड़ा खेल है, जिसे बड़ी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां पहले से मौजूद दवाओं में मामूली फेरबदल कर या फिर उनका नाम बदलकर अंजाम देती हैं। सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले का पूरी दुनिया पर असर पड़ेगा। भारत सहित कई देशों के रक्त कैंसर के रोगियों को इससे फायदा होगा। क्योंकि उन्हें कैंसर की सस्ती दवा 'इमेटिनिव' मिलेगी।

■ निरंकार सिंह

भारत के लगभग चार लाख रक्त कैंसर के रोगियों के लिए यह राहत की बात है कि उनकी दवाओं के महंगा होने का खतरा फिलहाल समाप्त हो गया है। सुप्रीम कोर्ट ने ग्लिवेक नामक कैंसर की दवा बनाने वाली स्विस कंपनी के उस दावे को खारिज कर दिया जिससे इस दवा पर उसका एकाधिकार हो जाता। स्विटजरलैंड की दवा कम्पनी नोवार्टिस को यदि ग्लिवेक का पेटेंट दे दिया जाता, तो वह हमारे यहां मरीजों से हर महीने सवा लाख रूपये तक वसूलने को स्वतंत्र हो जाती, जबकि इसी फॉर्मूले की जेनेरिक दवाएं महज आठ–नौ हजार रूपये में बाजार में उपलब्ध हैं।

दरअसल में यह एक बड़ा खेल है, जिसे बड़ी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां पहले से मौजूद दवाओं में मामूली फेरबदल कर या फिर उनका नाम बदलकर अंजाम देती हैं। सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले का पूरी दुनिया पर असर पड़ेगा। भारत सहित कई देशों के रक्त कैंसर के रोगियों को इससे फायदा होगा। क्योंकि उन्हें कैंसर की सस्ती दवा 'इमेटिनिव' मिलेगी।

स्विस कम्पनी नोवार्टिस ने अपनी नई दवा ग्लिवेक के पेटेंट को लेकर दावा किया था कि जो भारतीय कंपनियां कैंसर रोधी दवा बना रही हैं, वे उसके पेटेंट अधिकार का उल्लंघन कर रही है। नोवार्टिस के दावे को भारतीय बौद्धिक सम्पदा शिकायत मंडल ने ठुकरा दिया था और फिर मद्रास हाईकोर्ट ने भी कम्पनी के दावे को नहीं माना था। सुप्रीम कोर्ट ने भी यही बात कही है कि ग्लिवेक पहले से मौजूद इमेनिटिव में थोड़ी हेरफेर करके बनाई गई है, और इन दोनों दवाओं में इतना फर्क नहीं है कि इन्हें अलग– अलग दवा माना जाए और नोवार्टिस का पेटेंट स्वीकार कर लिया जाए। इस प्रक्रिया को 'एवरग्रीनिंग' कहा जाता है। कई कंपनियां ऐसा करती हैं कि जब उनके किसी लोकप्रिय या भारी फायदा दिलाने वाले उत्पाद के पेटेंट की मियाद खत्म होने लगती है, तो उसमें कुछ हल्का सा हेरफेर करके फिर से नये पेटेंट के लिए आवेदन कर देती है। ताकि अन्य कंपनियां यदि उसी उत्पाद को बनाना चाहती हैं, तो उन्हें

कई कंपनियां ऐसा करती हैं कि जब उनके किसी लोकप्रिय या भारी फायदा दिलाने वाले उत्पाद के पेटेंट की मियाद खत्म होने लगती है, तो उसमें कुछ हल्का सा हेरफेर करके फिर से नये पेटेंट के लिए आवेदन कर देती है। ताकि अन्य कंपनियां यदि उसी उत्पाद को बनाना चाहती हैं, तो उन्हें रोका जा सके।

रोका जा सके। पूरी दुनिया में जो लोग और संगठन यह मानते हैं कि मरीजों को सस्ती दवाएं मिलनी चाहिए, वे भारत को उम्मीद भरी नजर से देखते हैं, क्योंकि भारत का अपना दवा उद्योग काफी विकसित है और यहां के पेटेंट कानून ऐसे हैं कि अक्सर विदेशी महंगी दवाओं के सस्ते संस्करण यहां मिल जाते हैं।

वास्तव में जिस ग्लिवेक पेटेंट के लिए दावा किया जा रहा था, वह किसी नये फॉर्मूले से नहीं बनी है, बल्कि 15 वर्ष पूर्व बाजार में उतारी जा चुकी दवा का ही नया रूप है। इस दवा की मांग का अंदाजा इससे ही लगाया जा सकता है कि नोवार्टिस दुनिया भर में चार अरब डॉलर की ग्लिवेक दवा बेच डालती है। इस फैसले से भारतीय पेटेंट कानून की भूमिका को भी रेखाकिंत किया है, जिसकी धारा 3 (डी) को अदालत में चुनौती दी गई थी। इसके मुताबिक, उन्हीं दवाओं का पेटेंट किया जा सकता है, जो नई खोज या नये आविष्कार का नतीजा हो, पर इस कसौटी में ग्लिवेक विफल साबित हुई।

यह विडम्बना ही है कि अपनी चालाकी को स्वीकार करने के बजाय कम्पनी भारत के दवा क्षेत्र में निवेश को लेकर उलटी सीधी बयानबाजी कर रही है। कम्पनी का यह कहना उसकी बौखलाहट को दर्शाता है कि भारत में बौद्धिक सम्पदा का अच्छा वातावरण नहीं है, जबकि सच इससे उलट है। असल में विकसित देशों के बाजार में मंदी के कारण बहुराष्ट्रीय दवा कम्पनियों की नजर भारत सहित विकासशील देशों पर टिकी है।

अपनी चालाकी को स्वीकार करने के बजाय नोवार्टिस कम्पनी भारत के दवा क्षेत्र में निवेश को लेकर उलटी सीधी बयानबाजी कर रही है। कम्पनी का यह कहना उसकी बौखलाहट को दर्शाता है कि भारत में बौद्धिक सम्पदा का अच्छा वातावरण नहीं है, जबकि सच इससे उलट है। असल में विकसित देशों के बाजार में मंदी के कारण बहुराष्ट्रीय दवा कम्पनियों की नजर भारत सहित विकासशील देशों पर टिकी है।

इसी तरह एड्स के इलाज में इस्तेमाल होने वाली दवाओं का मामला है। विकसित देशों में बनी एड्स विरोधी दवाएं इतनी महंगी हैं कि अफ्रीका के गरीब मरीज उन्हें छू भी नहीं सकते, लेकिन भारत में बनी सभी दवाओं ने अफ्रीका में एड्स के खिलाफ मुहिम में बड़ी भूमिका निभाई है। सुप्रीम कोर्ट का फैसला जहां 'एवरग्रीनिंग' की प्रक्रिया को कमजोर करेगा, वहीं दुनिया के दूसरे देशों को रास्ता भी दिखायेगा।

बहुराष्ट्रीय दवा कम्पनियों की इस मुनाफाखोरी का विरोध सिर्फ विकासशील देशों में नहीं हो रहा है। कनाडा और आस्ट्रेलिया ने भी पेटेंट कानून के दुरूपयोग को रोकने के लिए कानून बनाये हैं। मौजूदा आर्थिक मंदी के चलते विकसित देशों के लोगों और सरकारों का भी दवाओं के अनाप–शनाप दामों पर ध्यान दिया गया है, क्योंकि अब उनके लिए भी इतना खर्च उठाना मुश्किल हो रहा है। दवा कम्पनियों का दावा है कि दवाओं के बनाने और उनके परीक्षण में उन्होंने इतना पैसा खर्च करना पड़ता है कि अगर उन्हें पेटेंट की सुरक्षा न मिले और वे अच्छा मुनाफा न कमा पाएं तो वे शोध में पैसे नहीं लगा पायेंगी। लेकिन यह कोई दवा कम्पनी नहीं बताती कि किसी दवा को बनाने में उसने कितना खर्च किया और उस आधार पर युक्तिसंगत क्या दाम होने चाहिए। आज जरूरत है कि भारत बहुराष्ट्रीय कम्पनियों पर निर्भर रहने के बजाय अपने यहां शोध पर ज्यादा जोर दे ताकि वह बाकी देशों के लिए ज्यादा बड़ी उम्मीद बन सके। लेकिन दुर्भाग्य है कि हमारे देश के नीति निर्माताओं का ध्यान इस तरफ बिल्कुल ही नहीं है।

एक सर्वेक्षण के अनुसार वर्तमान में एक करोड़ बीस लाख लोग प्रति वर्ष कैंसर के शिकार होते हैं। लगभग 28600 करोड़ डालर (13 लाख 73 हजार करोड़ रूपये) प्रतिवर्ष पूरे विश्व में कैन्सर के इलाज के नाम पर खर्च किये जाते हैं। विशेषज्ञों के

इसी तरह एड्स के इलाज में इस्तेमाल होने वाली दवाओं का मामला है। विकसित देशों में बनी एड्स विरोधी दवाएं इतनी महंगी हैं कि अफ्रीका के गरीब मरीज उन्हें छू भी नहीं सकते, लेकिन भारत में बनी सभी दवाओं ने अक्रीका में एड्स के खिलाफ मुहिम में बड़ी भूमिका निभाई है। सुप्रीम कोर्ट का फैसला जहां 'एवरग्रीनिंग' की प्रक्रिया को कमजोर करेगा, वहीं दुनिया के दूसरे देशों को रास्ता भी दिखायेगा।

अनुसार इस चक्र से बाहर आने के लिए सभी नीति–निर्माताओं, चिकित्सकों, स्वास्थ्य संगठनों को एक साथ तालमेल बिठाकर काम करने की जरूरत है। यूरोपियन मल्टी डिसिप्लीनरी कैंसर कांग्रेस ने स्टाकहोम में यह बात सामने रखी कि कैंसर के इलाज में खर्च और उसकी क्षमता के सवाल पर हमें कोई रास्ता नहीं सूझ रहा है और हमें जितनी जल्दी हो सके यह निर्णय लेना चाहिए कि हमें किस रास्ते पर चलना है। अथवा क्या हमें चुपचाप बैठकर धैर्य के साथ इस बात की प्रतीक्षा करनी चाहिए कि एक बेहतर सुबह वाला मुहावरा साबित होगा और अपने आप सब कुछ ठीक हो जायेगा। हम वैकल्पिक चिकित्सा की बात करें तो प्राचीन आयुर्वेदिक चिकित्सा में आयुर्वेदिक पोषक ऊर्जा का उल्लेख है।

भारत की अग्रणी कैंसर अनुसंधान संस्थान के रूप में पहचान बना चुकी संस्था डीएस रिसर्च सेन्टर पिछले 45 वर्षों से मानवीय भोज्य पदार्थों में निहित स्वाभाविक ऊर्जा पर अनुसंधान कर रही है। अब तो यह प्रमाणित हो चुका है कि डीएस रिसर्च सेन्टर द्वारा निर्मित दवा सस्ती और दुष्प्रभाव से मुक्त है तथा कैन्सर रोगियों के लिए अत्यन्त प्रभावशाली है। डीएस रिसर्च सेन्टर की एक महीने की दवा की लागत अन्य किसी पद्धति की दवा की लागत से सौगुनी कम होती है। इस कम लागत वाली दवा से देश–विदेश में हजारों कैंसर रोगी स्वस्थ और सामान्य जीवन बिता रहे हैं।

आज जरूरत है कि भारत बहुराष्ट्रीय कम्पनियों पर निर्भर रहने के बजाय अपने यहां शोध पर ज्यादा जोर दे ताकि वह बाकी देशों के लिए ज्यादा बड़ी उम्मीद बन सके। लेकिन दुर्भाग्य है कि हमारे देश के नीति निर्माताओं का ध्यान इस तरफ बिल्कुल ही नहीं है।

लन्दन के ब्रिटेन्स किंग्स हेल्थ पार्टनर इन्टेगरेटेड कैंसर सेन्टर के रिचर्ड सुलिवान के नेतृत्व में 37 अमीर देशों के विशेषज्ञों ने एक शोध में भाग लिया। इसमें उन्होंने पाया कि कई कारणों जैसे उम्रदराज लोगों की संख्या में वृद्धि और बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं में बढ़ती मांग के कारण कैंसर की दवाओं का मूल्य और इलाज के खर्च में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। लान्सेट, आंकोलाजी मेडिकल जरनल ने हाल में प्रकाशित एक लेख में यह बताया गया है कि प्रोस्टेट कैंसर की तीन खुराकों का मूल्य एक लाख डालर से भी अधिक होता है। और यह केवल इसलिए होता है कि रोगी की उम्र में कुछ महीने जोड़े जा सके। यूरोपियन कैंसर आर्गेनाइजेशन के अध्यक्ष मिचेल बोमन ने कहा है कि एक समय था जब कैंसर के इलाज के लिए नयी संभावनाएं मौजूद थी। वैज्ञानिक और चिकित्सकों में अपार उत्साह था, परन्तु आज समय है कि हम सोचें कि वास्तव में इस चिकित्सा का महत्व क्या है। ❑

आईपीआर को न मिले तरजीह

- न्यू इग्लैंड जर्नल के पूर्व एडीटर ने अभी हाल ही में अपनी किताब में खुलासा किया है कि विश्व में जितने भी बड़े दवा आविष्कार हुए हैं वे सरकार पोषित योजनाओं के तहत हुए हैं। दूसरे, ऐसे शोधों में ज्यादातर क्लीनिकल ट्रायल भी सरकारी अस्पतालों में गरीबों पर होते हैं। ऐसे में दवा कंपनियों का पूरी तरह से पेटेंट पर एकाधिकार नहीं होना चाहिए
- एक तर्क यह भी है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों में नई दवा पर खोज करने वाले अधिकतर वैज्ञानिक विकासशील देशों से होते है। इसलिए विकासशील देशों को पेटेंट कानूनों से रियायत मिलनी चाहिए। यानी दवा खोजने वाली कंपनियों को दवा बनाने की अनुमति हो लेकिन अन्य कंपनियां भी उसे बनाएं तो कोई हर्ज नहीं होना चाहिए।

कम्पल्सरि लाइसेंसिग का हक सरकार को

नए पेटेंट के प्रभावी होने के बावजूद सरकार के पास एक और रास्ता है कम्पल्सरि लाइसेंस। इसके द्वारा सरकार किसी भी दवा को, भले ही नए पेटेंट के तहत उस पर किसी एक कंपनी का एकाधिकार हो, सरकार किसी सरकारी या निजी कंपनी को उस दवा को बनाने की अनुमति दे सकती है। इसके पीछे देश की परिस्थितियां या किसी अन्य बीमारी विशेष के फैसले की आशंका को आधार बनाया जाता है। कुछ साल पहले कनाडा में एंथेक्स फैला था तो वहां की सरकार ने सिप्रोफ्लक्सोसिन बनाने के लिए कम्पल्सरि लाइसेंस जारी किए थे। ऐसे ही पूर्व में केन्द्र सरकार ने टेमिफ्लू के लिए कंपल्सिव लाइसेंस जारी किए थे।

एफडीआई

खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश के दूरगामी घातक परिणाम

भारत को अमेरिका अथवा किसी अन्य देश की आर्थिक नीतियों का अनुकरण नहीं करना चाहिए क्योंकि अमेरिका में बाजारोन्मुखी नीतियां अपनायी जाती हैं और लोकतांत्रिक भारत को जनोन्मुखी नीतियों की आवश्यकता है। क्योंकि भारत के आम आदमी (35 करोड़ की जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे है) ने स्वतंत्रता के 65 वर्षों के जीवन को अभी तक आत्मसात ही नहीं किया है. . .

■ डॉ. सूर्य प्रकाश अग्रवाल

केन्द्र की कांग्रेस के नेतृत्व वाली संप्रग सरकार ने जिस तेजी व जल्दबाजी में देश में खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश को अनुमति प्रदान करने का निर्णय लिया उससे देश के 5 करोड खुदरा व्यापारियों का भविष्य अंधकारमय तो होगा ही वहीं उनके 20 करोड़ परिजन भी सरकार के इस निर्णय से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकेंगे। देश में वर्तमान में कृषि के पश्चात् खुदरा व्यापार ही एक ऐसा क्षेत्र बचता था जहां देश की प्रत्येक तरह की युवा शक्ति को रोजगार प्राप्त हो जाता था। परन्तु सरकार के इस निर्णय से सबसे ज्यादा प्रभाव युवा वर्ग पर ही पड़ेगा व अब विदेशी कम्पनियों के खुदरा स्टोरों में भारत की युवा शक्ति मामूली से सेल्स मेन/गर्ल अथवा कोई छोटा–मोटा कार्य करने के लिए कम से कम वेतन पर नौकरी पर रखे जायेंगे।

सरकार के इस निर्णय से तकनीक, पूंजी, प्रशिक्षण व सूचना प्रौद्योगिकी में हो सकता है कि भविष्य में अल्पकालीन लाभ देखने को मिले परन्तु विशालकाय बहुराष्ट्रीय कम्पनियां क्या देश की 130 करोड जनसंख्या की सुख सुविधा से कोई वास्ता रख सकेंगी वो अपने–अपने देश के लिए भारत से मोटा मुनाफा कमा कर अपने अपने देश को भेजेंगी और भारत अर्थव्यवस्था के एक ऐसे मकड़जाल में फंस जायेगा और उससे निकलने लिए देश के आम आदमी को भारी कीमत चुकानी पड़ सकती है।

कांग्रेस की इस तेजी के पीछे का पर्दाफाश तब हुआ जब यह बात सामने आयी कि वालमॉर्ट जैसी खुदरा व्यापार की विदेशी दिग्गज कम्पनी ने देश के राजनेताओं में लॉबिंग करने के लिए 125 करोड़ रुपये की मामूली सी रकम व्यय की। हमारे राजनेता इस मामूली रकम में ही बिक गये और बिना सोचे, संसद में मौन रह कर व वॉकआउट करके सरकार को इस प्रकार का घातक निर्णय लेने में सहायता कर दी। कुछ राजनीतिक दलों के दुहरे चरित्र भी सामने आये और ऐसे दल बाहर कांग्रेस का विरोध जनता को दिखाने के लिए कर रहे थे परन्तु बहस के दौरान संसद से बाहर आकर कांगेस को समर्थन दे रहे थे। इस निर्णय से देश की प्रतिष्ठता, अखंडता, स्वाभिमान इत्यादि सभी दांव पर लग चुका है।

क्या भारत की छोटी मोटी कम्पनियों व खुदरा व्यापार में लगे लोग विदेशी विशालकाय कम्पनियों से आर्थिक रूप में टकरा पाएंगी? प्रारम्भ में विकास व क्षणिक रोजगार सृजन की मृगमरीचिका तो दिखाई दे सकती है परन्तु भारत की युवा पीढ़ी व समाज को सरकार के इस घातक निर्णय की आग अनिवार्य रुप से निगलेगी ही। देश की केन्द्रीय सत्ता में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह, योजना

आयोग के उपाध्यक्ष डॉ. मोंटेक सिंह अहलूवालिया व वित्त मंत्री पी. चिदम्बरम् जैसे प्रतिष्ठित व सम्मानित अर्थशास्त्री मौजूद है तो फिर वे भला खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश की छूट देने की यह घातक भूल कैसे कर सकते है? क्या इन प्रमुख व देश की अर्थव्यवस्था से भली प्रकार परिचित लोगों को इस निर्णय के घातक परिणामों का तनिक भी आभास नहीं हो रहा है अथवा फिर भ्रष्टाचारी राजनेता व ब्युरोक्रेटस इन तीनों प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों पर हावी हो गये हैं।

सरकार के इस निर्णय से तकनीक, पूंजी, प्रशिक्षण व सूचना प्रौद्योगिकी में हो सकता है कि भविष्य में अल्पकालीन लाभ देखने को मिले परन्तु विशालकाय बहुराष्ट्रीय कम्पनियां क्या देश की 130 करोड़ जनसंख्या की सुख सुविधा से कोई वास्ता रख सकेंगी वो अपने अपने देश के लिए भारत से मोटा मुनाफा कमा कर अपने अपने देश को भेजेंगी और भारत अर्थव्यवस्था के एक ऐसे मकड़जाल में फंस जाएगा और उससे निकलने लिए देश के आम आदमी को भारी कीमत चुकानी पड सकती है। क्या उस आर्थिक गुलामी से भारत की जनता को निकालने के लिए फिर कोई गांधी जन्म ले सकेगा? सरकार ने भारतीय जनता, समाज व आम आदमी के विषय में कुछ क्यों नहीं सोचा?

भारत सरकार ने खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश को मंजूरी देते हुए यह माना कि इससे किसान व उत्पादकों को उनके उत्पादन का बहुत अच्छा मूल्य मिल सकेगा। देश में खुदरा व्यापार की वस्तुओं व उपभोक्ता वस्तुओं की आपूर्ति अच्छे ढंग से व श्रृंखलाबद्ध तरीके से हो सकेगी। उत्पादक व उपभोक्ता के बीच सीधा संबंध रहने से उपभोक्ता को सस्ता व अच्छा उपभोगीय माल मिल सकेगा। देश में उद्यमशीलता बढ सकेगी। भारत में उद्यमशीलता अन्य देशों की तुलना में पहले से ही बहुत अच्छी है तथा खुदरा व्यापार में क्या ऐसी किसी तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता है जो भारत में विकसित व संस्कारित खुदरा व्यापार स्वंय विकसित नहीं कर सकता जिस तकनीकि ज्ञान को किसी अन्य देश से आयात करने की इस समय अत्यन्त ही आवश्यकता महसूस की गई जब भारत कई बहुत बड़ी–बड़ी समस्याओं से जूझ रहा हो।

भारतीयों ने चीन से आयात किया हुआ सस्ता उपभोगीय सामान अच्छी तरह से देखा व परखा परन्तु परिणामस्वरुप भारतियों ने स्वंय को लुटा पिटा महसूस किया और चीनी उत्पादन से भारतियेां का मोहभंग होने की शुरुआत हो गयी। चीन में निर्मित सामनों ने भारत के कई तरह के उद्योगों पर विपरीत प्रभाव डाला और बेरोजगारी व भ्रष्टाचारी बढ़ी।

भारतीयों ने चीन से आयात किया हुआ सस्ता उपभोगीय सामान अच्छी तरह से देखा व परखा परन्तु परिणामस्वरुप भारतीयों ने स्वंय को लुटा–पिटा महसूस किया और चीनी उत्पादन से भारतियेां का मोहभंग होने की शुरुआत हो गयी। चीन में निर्मित सामनों ने भारत के कई तरह के उद्योगों पर विपरीत प्रभाव डाला और बेरोजगारी व भ्रष्टाचारी बढ़ी।

भारत की कई बडी कम्पनियों ने अब बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की श्रेणी में आकर विदेशों में अपनी कार्य कुशलता व दक्षता भली प्रकार दिखाना शुरु कर दिया है। प्रारंभिक कुछ पंचवर्षीय योजनाओं में जो पूंजी की कमी भारत की सरकारों को खल रही थी उसमें सुधार हुआ है। अब भारत अपनी शर्तों पर विदेशों से समझौता कर सकने की स्थिति में आ गया है तो फिर भारत अपनी आर्थिक जरुरतों व स्वाभिमान के प्रति सतर्क क्यों नहीं रह पाता है।? जिस जिस देश ने खुदरा व्यापार में विदेशी पूंजी को आमंत्रित किया वहां उद्यमशीलता पर विपरीत प्रभाव पडा है। तकनीकी विकास नही हो सका सो अलग। इसके साथ ही वस्तुओं की आपूर्ति व्यवस्था में कोई मजबूती नहीं देखी गई।

विदेशी पूंजी वित्तीय बाजारों में भी विदेशी कम्पनियों के वित्तीय उत्पाद जोखिम भरे होने से भारत के आर्थिक विकास को कोई गति नहीं दे सकी है। पूंजी बाजार में अनिश्चितता व जोखिम का माहौल निरन्तर बढता जा रहा है। इस सब से देश के निवेशक पूंजी बाजार में उतरने से घबरा रहे है।

बढ़ते सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) को सफलता का पैमाना मानने की भूल सरकार कर रही है। जनहित में जीडीपी के स्थान पर विकास का कोई अन्य मापदंड सोचना चाहिए। भारत में लोकतंत्र है तथा जनता के द्वारा चुनी हुई सरकारें

भारत में लोकतंत्र है तथा जनता के द्वारा चुनी हुई सरकारें काम कर रही है। अतः आर्थिक क्षेत्र को वोट बैंक की राजनीति से दूर रखना चाहिए और आर्थिक नीतियां सदैव ही जनोन्मुखी होनी चाहिए ।

काम कर रही है। अतः आर्थिक क्षेत्र को वोट बैंक की राजनीति से दूर रखना चाहिए और आर्थिक नीतियां सदैव ही जनोन्मुखी होनी चाहिए क्योंकि बाजारोन्मुखी नीतियां बना कर अमेरिका ने स्वयं की अर्थव्यवस्था को नुकसान ही पहुंचाया है। भारत को बाजारोन्मुखी नहीं अपितू जनोन्मुखी की ही नीतिंया अपनानी चाहिए। आर्थिक विकास में जनता (समाज) का सहयोग आवश्यक है। वर्तमान में भारत के सामने असमानता, अशिक्षा, बिगडती कानून व्यवस्था, आंतकवाद, भ्रष्टाचार, अस्वास्थ्य व बढती जनसंख्या जैसी विशालकाय समस्याऐं खडी हुई है। भारत की सरकार, समाज की यही सब समस्याओं के उन्मूलन पर राजनीतिक कारणों से ध्यान नहीं दे रही है। इस सब का प्रभाव यह पडा कि भारत की सरकारें यहां के लोगों की तरफ पर्याप्त ध्यान नहीं दे रही है और सरकारें किसी न किसी प्रकार स्वार्थ की जातिगत, क्षेत्रगत, साम्प्रदायिक नीतिगत कार्य कर रही है। जिससे देश का किसी प्रकार का विकास सम्भव ही नहीं लगता हैं।

भारत में बाजार की गत बुरी हो चली है। मिलावटखोरी, मुनाफाखोरी, वायदाखिलाफी निरन्तर बढती ही जा रही है क्योंकि सरकार का बाजार पर से निंयत्रण राजनैतिक कारणों से निरन्तर कम हेाता जा रहा है और बहुसंख्यक आम आदमी व्यथित हो चला है। बाजार की ताकतों पर अंकुश कौन लगायेगा? देश के आर्थिक विकास के लिए बाजार का प्रभावी नियमन क्या आवश्यक नहीं है? सरकार बाजार को अपनी औद्योगिक वित्तीय, शिक्षा व कानून व्यवस्था की नीतियों की सहायता से नियंत्रण करती है। उससे ही देश का आर्थिक विकास बाजार मार्ग से होता हुआ आम आदमी की जीवन शैली तक पहुंच पाता है।

सरकार को देश के प्रत्येक बाजारी क्षेत्र पर अपना प्रभावपूर्ण नियंत्रण अपनाना चाहिए क्योंकि सरकार के उन क्षेत्रों में कमजोर होने से बाजार समाज में अनियंत्रणता को जन्म देता है जो शनैः शनैः बढ़ने की प्रवृत्ति रखती है और असामाजिकता आर्थिक विकास को निगल लेती है। यदि सरकार की नीतियां स्थायी आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने वाली है जो देश में गरीबी का उन्मूलन कर रोजगार के लिए आवश्यक संसाधन जुटा सकें जिसके लिए सरकार बाजार पर नियंत्रण सहित उपयोग कर सकें।

सरकार की आर्थिक नीतियों से पूंजीवाद भी पनपना नहीं चाहिए और समाज में आर्थिक असमानता भी प्रभावी ढंग से नियंत्रित हेाना चाहिए। देश की स्वंतत्रता के 65 वर्ष के इतिहास में कुल 130 करोड जनसंख्या में से मात्र 3.15 करोड़ जनसंख्या ही आयकर दाता की श्रेणी में आ सकी है और उसमें से भी 89 प्रतिशत आयकर दाता मात्र 10 लाख रुपये वार्षिक से भी कम कमाते है। मुठ्ठी भर करोड़पतियों के लिए सरकार आयकर लगा कर भ्रष्टाचार के माध्यम से पूरे समाज के हितों को ही दांव पर लगा देती है। सरकार अपनी प्रभावी भूमिका निभाते हुए देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व पर्यावरण की दृष्टि से स्थायी आर्थिक वृद्धि के लिए नीतियां बनाये। आम आदमी सरकार की आर्थिक नीतियों के केन्द्र में रहना चाहिए और यह आम आदमी खुदरा बाजार से जुडा हुआ है।

वैश्वीकरण के लिए आयोग का गठन

अतः खुदरा व्यापार पर सरकार को राजनीति नहीं करनी चाहिए तथा आम आदमी की आर्थिक सुदृढता की ओर ध्यान देना चाहिए। गत दस – पन्द्रह वर्षों में वैश्वीकरण की चर्चा बहुत जोर शोर से की जा रही है। वैश्वीकरण को भी भारत अपने स्वाभिमान की रक्षा करते हुए अपनी शर्तों पर क्यों नहीं अपनाता है? सरकार भारत में वैश्वीकरण से अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए वैश्वीकरण के प्रबंध व नियंत्रण के लिए एक अराजनीतिक व संवैधानिक आयोग का गठन क्यों नहीं करता हैं? यह आयोग रीति व नीतियां बना कर सरकार को आर्थिक नीतियों के बारे में सलाह दे सके और सरकार उन नीतियों को लाजिम तरीके से अपनायें तभी आम आदमी को लाभ प्राप्त हो सकता है। कभी कांग्रेस, कभी भाजपा, कभी अल्पमत वाली तथा कभी गठबंधन वाली सरकारें आती जाती रहीं है। परन्तु आर्थिक नीतियों में अस्थायित्व नहीं होना चाहिए और दीर्घकालीन, अराजनीतिक व आम आदमी के लिए आर्थिक नीतियेां का नियमन व विकास करना चाहिए तभी स्थायी आर्थिक विकास सम्भव हो सकता है।

भारत को अमेरिका अथवा किसी अन्य देश की आर्थिक नीतियों का अनुकरण नहीं करना चाहिए क्योंकि अमेरिका में बाजारोन्मुखी नीतियां अपनायी जाती हैं और लोकतांत्रिक भारत को जनोन्मुखी नीतियों की आवश्यकता है। क्योंकि भारत के आम आदमी (35 करोड की जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे है) ने स्वतंत्रता के 65 वर्षों के जीवन को अभी तक आत्मसात ही नहीं किया है। देश की बहुसंख्य गरीब जनता प्रातः से सायं तक रोजी रोटी के लिए लड़ती रहती है और यह लड़ाई खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश से अब और बढने की उम्मीद हो चली हैं। ❑

स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में ग्लोबलाइजेशन

स्वामीजी धन मांगने के साथ–साथ देशवासियों को चेतावनी देते थे कि पश्चिमी लोगों को अपना मसीहा न माने। आज सरकार के वक्तव्य में यह चेतावनी सुनाई नहीं देती। इसका अर्थ है कि सरकार पश्चिमी ताकतों से समन्वय किसी मजबूरी के कारण नहीं कर रही है। बल्कि सरकार पश्चिमी ताकतों को अपना मसीहा मान रही है।

■ डॉ. भरतझुनझुनवाला

इस वर्ष स्वामी विवेकानन्द का 150वां जन्मदिन मना रहे है। स्वामीजी की विशेषता थी कि उन्होंने आम आदमी को अपने चिन्तन के केन्द्र में रखा था। स्वामीजी का मानना था कि भारतीय समाज के पिछड़ेपन को दूर करने का उपाय गरीब को शिक्षा देना था। देश के नागरिक यदि भाग्य पर निर्भर रहने के स्थान पर कर्म पर ध्यान देंगे तो देश उठ खड़ा होगा। नागरिकों में कर्म के प्रति आस्था उत्पन्न करने के लिये शिक्षा का प्रसार जरूरी था। शिक्षा के इस कार्य के लिये धन और संगठन की जरूरत थी। उस समय भारत गरीब देश था। इस कार्य के लिये देश में धन जुटाना कठिन था। अतएव स्वामीजी ने पश्चिमी देशों में धन जुटाने का निर्णय लिया। स्वामीजी को पूरी समझ थी कि इन्हीं पश्चिमी देशों के द्वारा शोषण किये जाने के कारण भारत गरीब हो चला था। परन्तु युद्धनीति में कभी–कभी दुश्मन से संधि करनी पड़ती है। इस नीति को अपनाते हुये स्वामीजी ने पश्चिमी देशों से सहायता मांगी थी।

स्वामीजी ने लिखाः ''भारत समझ नहीं पा रहा है कि भुखमरी के इस प्रकोप से कैसे जूझा जाये। भारत के श्रेष्ठ संसाधनों का विदेशियों द्वारा चूसा जाना और भारत में बने माल के खुले निर्यात के कारण देश गरीब हो गया है। ऊपर से गरीबों के आपस में झगड़ने की प्रवृत्ति देश के प्राण हर लिये हैं।'' भारत के लोगों का आत्मसम्मान क्षय हो गया था। उनमें विदेशी शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने की ताकत नहीं रह गयी थी। इसलिये जरूरी था कि देशवासियों के आत्मसम्मान को जागृत किया जाता।

स्वामीजी की दृष्टि में भारत एक महान सभ्यता थी। जो कि आर्थिक रूप से सम्पन्न थी। आपने कहाः ''लम्बे समय से भारत ने सभी देशों वाणिज्यिक गतिविधियों में मात दी है। लोगों को ज्ञान नहीं है कि बैबीलान, ईरान, ग्रीस और रोम का वैभव भारत पर निर्भर था।'' स्वामीजी समृद्धि और आध्यात्म को साथ–साथ लेकर चलना चाहते थे। वे मानते थे कि आर्थिक समृद्धि के बगैर आध्यात्मिक

स्वामीजी भारत को विश्व व्यापार से भारत को अलग नहीं रखना चाहते थे। लेकिन उनकी मांग थी कि व्यापार बराबरी के आधार पर होना चाहिये। ऐसा नहीं कि हमारा माल सस्ता बिके और आपका माल हम महंगा खरीदें। जब हम विदेशी निवेशकों को आकर्षित करते हैं तो उन्हें अपने देश के उद्यमियों को नष्ट करने का न्योता भी देते हैं। देखा जाता है कि टेलीविजन जैसे कई क्षेत्रों में भारतीय कम्पनियां लुप्तप्राय हो गयी हैं। पूरे बाजार पर पश्चिमी कम्पनियों का कब्जा हो गया है। यह परिस्थिति स्वामीजी के चिन्तन के अनुरूप व्यवहार न करने के कारण उत्पन्न हुयी है।

उद्देश्यों को हासिल नहीं किया जा सकता है।

समस्या यह थी कि जिन विदेशियों से लड़ना था उन्हीं से शिक्षा के लिये धन भी इकट्ठा करना था। शिक्षा के लिये धन मांगने की प्रक्रिया में हम पुनः पश्चिमी देशों का वर्चस्व स्वीकार न कर लें इसलिये स्वामीजी ने कहाः ''तुम्हें विदेशी मदद पर निर्भर नहीं रहना चाहिये। व्यक्ति की तरह देश को स्वयं अपनी सहायता करनी चाहिये।'' स्वामीजी भारतीयों को ललकारते हैं कि विदेशियों से मुक्ति की अपेक्षा न करें। वे कहते हैं कि ''हमारे कुछ देशवासी यूरोपियों का अनुसरण करने लगे हैं–बाह्य जीवन में और विचारों में। वे सदा यूरोपीयों से याचना करते रहते हैं कि 'हम कमजोर हैं, आप हमारे तारणहार हैं, हम पर दया कीजिये और हमें उठाइये।''

स्वामीजी की दृष्टि में यूरोपीय सभ्यता आसुरी थी। उन्हें वे विरोचन की संतान बताते हैं। वे कहते हैं : ''पूर्व और पश्चिम को समझने का सर्वश्रेष्ठ उपाय है हिन्दू देवताओं की संतान हैं और पश्चिमी लोग असुरों की।'' स्वामीजी भारत को विश्व व्यापार से भारत को अलग नहीं रखना चाहते थे। लेकिन उनकी मांग थी कि व्यापार बराबरी के आधार पर होना चाहिये। ऐसा नहीं कि हमारा माल सस्ता बिके और आपका माल हम महंगा खरीदें। जब हम विदेशी निवेशकों को आकर्षित करते हैं तो उन्हें अपने देश के उद्यमियों को नष्ट करने का न्योता भी देते हैं। देखा जाता है कि टेलीविजन जैसे कई क्षेत्रों में भारतीय कम्पनियां लुप्तप्राय हो गयी हैं। पूरे बाजार पर पश्चिमी कम्पनियों का कब्जा हो गया है। यह परिस्थिति स्वामीजी के चिन्तन के अनुरूप व्यवहार न करने के कारण उत्पन्न हुयी है।

आज के नेता तर्क देते हैं कि जब स्वामीजी ने स्वयं पश्चिमी देशों से शिक्षा के प्रसार के लिये धन मांगा था तो सरकार द्वारा पश्चिमी देशों से निवेश मांगने में क्या हानि है? यह तर्क एक मौलिक बात को भूल जाता है। स्वामीजी पश्चिम से धन नहीं मांगना चाहते थे। परन्तु देश इतना गरीब था कि अपने सीमित संसाधनों आधुनिक शिक्षा का प्रसार करना कठिन था। इस विकट समस्या के समाधान के लिये स्वामीजी ने पश्चिम से धन मांगा परन्तु साथ–साथ देशवासियों को चेतावनी देते रहे कि पश्चिमी लोगों को अपना मसीहा न माने। आज सरकार द्वारा जो विदेशी निवेश की याचना की जा रही है उसमें मौलिक अन्तर है। एक यह कि हमारे सामने ऐसी मजबूरी नहीं है कि विदेशी धन के बगैर हमारा विकास न हो सके।

स्वामीजी विदेशियों से पैसा लेते समय उनके मूल आसुरी चरित्र का ध्यान रखते थे। जैसे स्वामीजी ने पश्चिमी देशों से शिक्षा के प्रसार के लिये पैसा मांगा लेकिन क्या शिक्षा दी जायेगी इसका निर्णय करने का अधिकार अपने हाथ में रखा। स्वामीजी ने विदेशी यूनिवर्सिटियों को भारत में शाखा खोलने का न्योता नहीं दिया। इसी प्रकार विदेशी धन को लेकर भारतीय कम्पनियां अपने जरूरतों के अनुसार उत्पादन करें तो स्वीकार किया जा सकता है। परन्तु विदेशी कम्पनियों को अपने बाजार में मनमाना करने की छूट नहीं देनी चाहिये।

आज के नेता तर्क देते हैं कि जब स्वामीजी ने स्वयं पश्चिमी देशों से शिक्षा के प्रसार के लिये धन मांगा था तो सरकार द्वारा पश्चिमी देशों से निवेश मांगने में क्या हानि है? यह तर्क एक मौलिक बात को भूल जाता है। स्वामीजी पश्चिम से धन नहीं मांगना चाहते थे। परन्तु देश इतना गरीब था कि अपने सीमित संसाधनों आधुनिक शिक्षा का प्रसार करना कठिन था। इस विकट समस्या के समाधान के लिये स्वामीजी ने पश्चिम से धन मांगा परन्तु साथ–साथ देशवासियों को चेतावनी देते रहे कि पश्चिमी लोगों को अपना मसीहा न माने। आज सरकार द्वारा जो विदेशी निवेश की याचना की जा रही है उसमें मौलिक अन्तर है। एक यह कि हमारे सामने ऐसी मजबूरी नहीं है कि विदेशी धन के बगैर हमारा विकास न हो सके। देश भारी मात्रा में सोने का आयात कर रहा है जो कि हमारी समृद्धि का द्योतक है। तमाम रपटों से ज्ञात होता है कि स्विस बैंकों में भारतीयों का भारी मात्रा में धन जमा है। अतः अपनी घरेलू नीतियों में सुधार करके इस घरेलू पूंजी पूंजी के सदुपयोग पर पहले ध्यान देना चाहिये। घरेलू नीतियों में सुधार करने के स्थान पर विदेशियों से याचना करना स्वामीजी के सिद्धान्तों के विरूद्ध है।

दूसरा अन्तर है कि स्वामीजी धन मांगने के साथ–साथ देशवासियों को चेतावनी देते थे कि पश्चिमी लोगों को अपना मसीहा न माने। आज सरकार के वक्तव्य में यह चेतावनी सुनाई नहीं देती। इसका अर्थ है कि सरकार पश्चिमी ताकतों से समन्वय किसी मजबूरी के कारण नहीं कर रही है। बल्कि सरकार पश्चिमी ताकतों को अपना मसीहा मान रही है। यह नीति स्वामीजी के चिन्तन के विपरीत होने के साथ–साथ देश के लिये घातक होगी। ❑

लेख

विवेकानंद का अर्थ और प्रबंध चिंतन

किसी भी चिंतक के मस्तिष्क पर तात्कालिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। विवेकानंद जी का जन्म भारत में उस समय हुआ जब देश गुलाम था और आजादी के लिए आंदोलनों का सूत्रपात हो गया था। उन परिस्थितियों में उन्हें अपने पहनावे की चिंता नहीं थी, अपने ऊपर ध्यान की आवश्यकता भी उन्होंने नहीं समझी। सच्चे अर्थों में देश या समाज सेवा वही कर सकता है। जिसका अपने ऊपर ध्यान न हो। विवेकानंद को पहनावे का अर्थ था कि ''तन ढका रहे, मन अपना काम करता है तथा उस देश सेवा के कार्य में धन की अधिक आवश्यकता न पड़े।''

■ डॉ. जय प्रकाश मिश्र

विवेकानंद की गणना दुनिया के उन गिने–चुने चिंतकों में होती है जिन्होंने समाज सुधार के लिए किसी देश की सीमाओं में बंधकर कार्य नहीं किया। वह वास्तव में एक मनीषी थे, एक चिंतक थे, एक युग दृष्टा एक समाजसुधारक थे और इन सबके साथ एक अच्छे अर्थशास्त्री और प्रबंधक थे। आज वर्तमान युग को यदि 'अर्थयुग' कहा जाए तो कोई अतियोक्ति नहीं। इस युग में भी विवेकानंद के आदर्श विचार प्रासांगिक है। विवेकानंद के दर्शन में जीवन जीने की शैली के साथ, समाज के साथ कार्य व्यवहार तथा समाज का शैक्षणिक उत्थान होते हुए राष्ट्र निर्माण हो, का ज्ञान मिलता है।

विवेकानंद का अर्थ चिंतन उनके आदर्श विचारों के साथ उनकी जीवनशैली में देखने को मिलता है। आज के वर्तमान संदर्भों में व्यक्तित्व एवं कृतित्व की जो हम बात करते हैं उसके लिए हमें विवेकानंद जी के जीवन दर्शन को ज्ञान चक्षु खोलकर देखना और अध्ययन करना पड़ेगा।

विवेकानंद के अर्थदर्शन को निम्न संदर्भों में विस्तृत रूप से देखेंगे :–

विवेकानंद के परिधान से झलकता अर्थचिंतनः किसी भी चिंतक के मस्तिष्क पर तात्कालिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। विवेकानंद जी का जन्म भारत में उस समय हुआ जब देश गुलाम था और आजादी के लिए आंदोलनों का सूत्रपात हो गया था। उन परिस्थितियों में उन्हें अपने पहनावे की चिंता नहीं थी, अपने ऊपर ध्यान की आवश्यकता भी उन्होंने नहीं समझी। सच्चे अर्थों में देश या समाज सेवा वही कर सकता है। जिसका अपने ऊपर ध्यान न हो। विवेकानंद को पहनावे का अर्थ था कि ''तन ढका रहे, मन अपना काम करता है तथा उस देश सेवा के कार्य में धन की अधिक आवश्यकता न पड़े।''

वर्तमान युग में कर्मयोग पर विशेष बल दिया। किसी भी प्रकार का कर्म या कार्य व्यक्ति को उद्यमी बनाता है। उद्यमशील व्यक्ति ही वर्तमान में अर्थव्यवस्था को ऊपर उठाने में योगदान करता है। ऐसा भाव उनके कर्मयोग के दर्शन से प्रस्फुरित होता है। स्वामी जी का कथन है कि ''चारों और सम्भाव से विकास लाभ करना है मेरे कहे हुए धर्म का आदर्श है।''

वेदांत दर्शन के आलोक में विवेकानंद ने इस बात पर बल दिया कि 'आत्मतत्व' महत्वपूर्ण है इस आत्मतत्व में ही आध्यात्मिकता, भौतिकता, मानसिकता सभी सामहित है यही आत्मतत्व व्यक्ति को ज्ञान कराता है कि रहन–सहन की वेशभूषा, आध्यमिकता से परिपूर्ण या भौतिकता से परिपूर्ण? कैसी होनी चाहिए? यह हमारे चिंतन हमारी मानसिकता पर निर्भर करता है। अतः विश्व में केवल एक आत्मत्व है बकि सब कुछ उसकी अभिव्यक्तियां हैं। यही अभिव्यक्तियां विवेकानंद जी के अनुसार उसका कर्मकाण्ड है।

कर्मयोग पर विशेष बल : स्वामी विवेकानंद ने यद्यपि ज्ञान, भक्ति योग एवं कर्म थे चार मार्ग मुक्ति की ओर ले जाने वाले बताए। परंतु वर्तमान युग में कर्मयोग पर विशेष बल दिया। किसी भी प्रकार का कर्म या कार्य व्यक्ति को उद्यमी बनाता है। उद्यमशील व्यक्ति ही वर्तमान में अर्थव्यवस्था को ऊपर उठाने में योगदान करता है। ऐसा भाव उनके कर्मयोग के दर्शन से प्रस्फुरित होता है। स्वामी जी का कथन है कि ''चारों और सम्भाव से विकास लाभ करना है मेरे कहे हुए धर्म का आदर्श है।'' अर्थात् कर्म से विकास और विकास में भी सम्भाव यही जीवन की आदर्श स्थिति है। अर्थात् कर्म ही धर्म है। उन्होंने आगे कहा कि धर्म ही राष्ट्र की रीढ़ है। इसी से हमारी उन्नति में बुद्धि होना संभव है।'' चरित्रगढ़न के लिए महान कार्यों का ही महत्व नहीं

है। बल्कि छोटे–छोटे कार्यों का भी महत्व है। सदा अच्छे कार्य करने से, पवित्र विचार करने से बुरी आदतों को बस में किया जा सकता है। स्वामी जी के कहने का अभिप्राय यह था कि सद्कर्म से ही व्यक्ति महान होता है। और वही कर्म जीवकोपार्जन का भी माध्यम बनता है। उनका कहना था कि अपने अंदर की सुप्तशक्तियों को सक्रिय करो तभी ज्ञान प्राप्त होगा। और वही ज्ञान तुम्हें कर्मशील बनाएगा। अतः कर्मकौशल का उल्लेख इनके चिंतन में मिलता है। उन्होंने शारीरिक, दुर्बलता को रेखांकित करते हुए लिखा है कि यह दुर्बलता ही आलस्य का कारण है जो व्यक्ति को कर्म से दूर करता है।

गरीबी और गरीबों के प्रति संवेदनाः 19 मार्च 1894 को शिकागो से एक पत्र स्वामी जी ने भारत भेजा जिसमें भारत की गरीबी का उल्लेख करते हुए लिखा था कि भारत में अत्यधिक गरीबी है। वहां गरीब पशुबल जीवन यापन कर रहे हैं। यह उनकी गरीबी के प्रति संवेदना को उजागर करती है। देश के बाहर रहने के बावजूद भी उन्हें भारत के गरीबी की चिंता सदैव सताती रहती थी।

भारतीय शिक्षा में श्रद्धा के अभाव से वह दुखी थे क्योंकि ऐसी शिक्षा जिससे श्रद्धा का भाव प्रकट हो वह श्रद्धा भाव ही किसी कार्य को करने अनूकूलतिक प्रबंधन का मार्ग प्रशस्त करता है। उनके मत से श्रद्धा से समस्त जगत क्रियाशील होता है और श्रद्धा के द्वारा ही मनुष्य के जीवन को समृद्धशाली बनाया जा सकता है। यही समृद्धशीलता भारत के गरीबों में स्वामी विवेकानंद जी चाहते थे। मैं दरिद्र हूँ और दरिद्रों को प्यार करता हूँ इस कथन से संवेदना झलकती है। ''आओ हम पद दलित भारतीयों के लिए प्रार्थना करे जो गरीब, पुरोहितों (धनिकवर्ग) के नानप्रकार के छल और अत्याचार से जकड़े हुए हैं।''

अन्न भण्डारण पर टिप्पणीः विवेकानंद ने एक जगह कहा कि 'भारत खण्ड अन्न का अक्षय भण्डार रहा है, आज वहीं उसी अन्न के लिए कैसी पुकार उठ रही है।'' यह कथन माननीय स्वामी जी को वर्तमान संदर्भ में और भी अधिक

स्वामी जी ने अपने चिंतन में बाल्यकाल से ही स्वभाषा के संस्कार देनी की बात कही है। बच्चों को ऐसी कहानियां सुनाई जानी चाहिए जो बचपन से ही बच्चों को दुर्बल न बनाए/पाठ्यक्रमों भी बच्चों को सबल बनाने वाले होना चाहिए। उनका मत था कि स्वदेशी भाषाओं पर पहले अधिकार किया जाना चाहिए उसके पश्चात् विदेशी भाषा का ज्ञान लाभप्रद हो सकता है।

प्रासांगिक बना देता है। वर्तमान में किसान आत्महत्याएं कर रहे हैं। अन्न भण्डारण की उचित व्यवस्था नहीं है। खाद्य सुरक्षा के लिए सरकार के पास कोई नीतियाँ नहीं है। हजारों क्विंटल खाद्यान्न खुल आसमान में सड़ रहा है। परंतु उसे गरीबी में बांटने का कोई उचित प्रबंध नहीं है। इसी अन्न के उत्पादन का उचित भण्डारण और उस भण्डारण का उचित वितरण ही तो विवेकानंद जी को प्रबंधन कहा जा सकता है। वे तो समस्त जातियों के गरीबों में ऐसा समन्वय या प्रबंध चाहते थे कि लोग अपने पैरों पर खड़े हो सके। उन्होंने गरीबी के संदर्भ में एक जगह उपनिषदों का जिक्र करते हुए लिखा है कि ''उपनिषदों में मुक्ति शब्द का अर्थ स्वाधीनता से लगाया जाए और दैहिक स्वाधीनता, मानसिक स्वाधीनता एवं आध्यात्मिक स्वाधीनता सभी को सामहित होना ही उपनिषदों का मूलमंत्र है।'' यह दैहिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वाधीनता की व्याख्याता ही सभी प्रकार की स्वाधीनता के साथ समन्वय एवं प्रबंधन का बोध कराती है।

स्वभाषा स्व संस्कृति एवं वेशभूषा की व्याख्याः स्वामी जी ने अपने चिंतन में बाल्यकाल से ही स्वभाषा के संस्कार देनी की बात कही है। बच्चों को ऐसी कहानियां सुनाई जानी चाहिए जो बचपन से ही बच्चों को दुर्बल न बनाए/पाठ्यक्रमों भी बच्चों को सबल बनाने वाले होना चाहिए। उनका मत था कि स्वदेशी भाषाओं पर पहले अधिकार किया जाना चाहिए उसके पश्चात् विदेशी भाषा का ज्ञान लाभप्रद हो सकता है। पाठ्यक्रम बच्चों को सदैव ऐसे पढ़ाए जाने चाहिए। जिससे सुसंस्कृति होने की शिक्षा मिले ताकि हमारी संस्कृति की रक्षा होती रहे। परिणामस्वरूप उच्च नैतिकता और उदात आदर्शों से परिपूर्ण समाज का निर्माण होता है। विवेकानंद जी के चिंतन में स्वदेशी की अवधारणा का पुर मिलता है स्वभाषा, स्वसंस्कृति एवं स्व वेषभूषा के पक्षधर थे। उनका कथन था कि मातृभाषा का ज्ञान पहले हो उसके बाद विदेशी भाषाओं का ज्ञान अर्जित करने में कोई बुराई नहीं है। भारतीय आदर्श हमें अपनी आवश्यकताएं रखने की प्रेरणा देता है।

जबकि पाश्चात्य सभ्यता भौतिक ऐश्वर्य प्राप्त करने की।

उन्होंने आगे कहा कि ''तुम यंत्र की भांति कार्य में लगे रहो तथा अपनी शक्ति का परिचय कुछ भौतिक एश्वर्य प्राप्त करके दिखाओ तथा अधिक से अधिक धन सम्पत्ति के संग्रह में गर्व करो।'' यह कथन उनके आर्थिक चिंतन को उजागर करता है। भारत में जहां वह आवश्यकताओं की सीमितता पर बल देते थे वही पाश्चात्य जगत के लिए वह यंत्र या मशीनों के पक्षधर थे। उन दिनों देश की परिस्थितियां भी सीमितता की पक्षधर थी। महान अर्थशास्त्री राविन्सन ने तो सीमितता को अर्थशास्त्र को परिभाषा ही बना दिया। अर्थात् विवेकानंद जी का सीमित आवश्यकताओं का अर्थ चिंतन अर्थशास्त्र के लिए महान देन थी।

उन्नति का आधार जनसाधारण की शिक्षाः स्वामी जी कथनानुसार भारत वर्ष की उन्नति का आधार जनसाधारण में शिक्ष और बुद्धि का प्रसार होना है। गरीबों की दशा के लिए वह अशिक्षा और अज्ञानता को जिम्मेदार मानते थे। उनका मत था कि ''जब तक असंख्य मनुष्य भूख और अज्ञान में अपना जीवन बिता रहे तब किसी भी व्यक्ति को चैन से नहीं बैठना चाहिए। जनसमूह की अवहेलना करना महान राष्ट्रीय पाप है।'' मुट्ठी भर लोगों के हाथों में बुद्धि का एकाधिपत्य नहीं होना चाहिए। निम्न वर्ग के लोगों की सबसे बड़ी सेवा यह है कि उनको शिक्षित किया जाए, उनके सामने विचारों को रखा जाए। स्वामी जी के मतानुसार अशिक्षा और अज्ञानता ही गरीबी का मूल कारण था अतः यदि गरीबी उन्मूलन कोई देश चाहता है तो देश के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित किया जाना आवश्यक है।

कृषि, वाणिज्य के संबंध में विचारः हमारा राष्ट्र झोपड़ियों में बसता है। उन्हें कृषि की शिक्षा दी जानी चाहिए क्योंकि भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि उन्नति पर ही देश की उन्नति निर्भर है। कृषि ही उद्योग और वाणिज्य का मूल है।

विवेकानंद की विकास संबंधी अवधारणाः विवेकानंद जी ने विकास की अनेक अवधारणाओं को स्पष्ट किया।

वर्तमान संदर्भ में विवेकानंद के बताए मार्ग पर ही कृषि, उद्योग व्यापार के लिए विशेष प्रकार के प्रशिक्षण केन्द्र कौशल विकास केन्द्र आदि संचालित है। जो किसी न किसी रूप में गरीब व्यक्तियों को रोजी–रोटी देने का माध्यम बन रही है। स्वामी जी व्यक्ति को कृषि, उद्योग और व्यवसाय में आत्मनिर्भर बनाकर लोक कल्याण चाहते थे।

उनका अभिप्राय था कि मानव निर्माण के लिए विकास के अनेक पायदानों से होकर गुजर पड़ता है।

(अ) **शारीरिक विकासः** स्वामी जी के उपदेश में यह देखने को मिलता है कि बिना शारीरिक बल्कि विकास के मनुष्य कर्मशील और गतिशील नहीं हो सकता। दुर्बलता को वह पाप मानते थे। इसलिए कहते थे कि ''दुर्बलता का परित्याग करो'' वर्तमान में बलिष्ठ मनुष्यों की आवश्यकता हो जिनकी पेशियां दृढ़ और स्नायु फौलाद की तरह कठिन हो।

सामाजिक और सांस्कृतिक विकासः स्वामी जी सामाजिक और सांस्कृतिक दोनों के विकास पर बल देते थे आत्मिक विकास ही व्यक्तिक विकास है। परंतु यह तब तक संभव नहीं है जब तक मनुष्य का सामाजिक विकास नहीं हो जाता। इस कथन का अभिप्राय है कि पहले सामाजिक विकास हो और चूंकि व्यक्ति समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई है अतः समाज के विकास में ही व्यक्ति का विकास निहित है। जब सामाजिक सरोकारों के माध्यम से संस्कृति का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरण होता है उसे वह सांस्कृतिक विकास की संज्ञा प्रदान करते है उनके अनुसार ''संस्कृति बौद्धिक कार्य की उपज नहीं, वह तो मानव व्यवहार में व्याप्त है।''

(स) **जीवकोपार्जन के लिए कृषि, उद्योग तकनीकि ज्ञान महत्वपूर्ण :** प्रचलित शिक्षा जीवकोपार्जन के लिए पर्याप्त नहीं है स्वामी जी के मतानुसार विद्यार्थियों को कृषि की शिक्षा, उद्योग थी शिक्षा, तकनीकी ज्ञान की शिक्षा एवं व्यावसायिक ज्ञान की शिक्षा दी जाना चाहिए। इसी शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति जीवकोपार्जन कर सकता है। वर्तमान संदर्भ में विवेकानंद के बताए मार्ग पर ही कृषि, उद्योग व्यापार के लिए विशेष प्रकार के प्रशिक्षण केन्द्र कौशल विकास केन्द्र आदि संचालित है। जो किसी न किसी रूप में गरीब व्यक्तियों को रोजी–रोटी देने का माध्यम बन रही है। स्वामी जी व्यक्ति को कृषि, उद्योग और व्यवसाय में आत्मनिर्भर बनाकर लोक कल्याण चाहते थे।

स्वामी विवेकानंद जी के आर्थिक विचारों का सार था कि बिना शिक्षा और ज्ञान के व्यक्ति उद्यमी नहीं बन सकता।'' उनके अनुसार निर्धन, गिरे स्तर वाले लोगों का कोई मित्र नहीं है।'' अतः इस वर्ग को ऊँचा उठाने का नैतिक कार्य ही अर्थशास्त्र की विषयवस्तु है और राष्ट्र समृद्धि के लिए देश के प्रत्येक व्यक्ति का समर्पण भाव से कार्य करना ही उनका श्रेष्ठ प्रबंधन था।❑

खाद्य सुरक्षा की छतरी में छेद

यह दुखद है कि जरूरतमंद तक खाद्यान्न पहुंचाने की यह योजना अब तक भ्रष्टाचार में लिप्त होकर निराशाजनक बनी हुई है। सर्वेक्षण बताते हैं कि भ्रष्ट अधिकारियों, बेईमान दुकानदारों, धोखेबाज ट्रांसपोर्टरों और लालची दलालों के बीच एक मजबूत गठजोड़ के कारण यह व्यवस्था मृतप्राय हो गई है. . .

■ **जयंतीलाल भंडारी**

वर्ष 2013–14 के बजट में वित्त मंत्री पी. चिदंबरम ने खाद्य सुरक्षा विधेयक के क्रियान्वयन के लिए शुरुआती राशि के तौर पर 10 हजार करोड़ रुपये आवंटित किए हैं। इससे साफ होता है कि सरकार

इस विधेयक को पारित कराने की तैयारी कर रही है। ऐसा होने पर आगामी वित्त वर्ष में खाद्य सुरक्षा के लिए इस समय आवंटित 80 हजार करोड़ रुपये की धनराशि बढ़कर 1.20 लाख करोड़ रुपये के स्तर पर पहुंच सकती है। यदि खाद्य सुरक्षा विधेयक पारित होकर कानून बन जाता है, तो यह मनरेगा की तरह यूपीए सरकार के दूसरे कार्यकाल का सबसे महत्वाकांक्षी कार्यक्रम होगा।

चूंकि देश में विभिन्न कारणों से करोड़ों लोगों के लिए दो वक्त का भोजन जुटाना कठिन होता जा रहा है, अतः खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम में लोगों की भूख मिटाने का प्रयास होगा। इंडियन काउंसिल फॉर रिसर्च ऑन इंटरनेशनल रिलेशन का कहना है कि देश में खाद्यान्न की उत्पादकता घटने, ग्लोबल वार्मिंग के कारण मानसून की वर्षा कम होने, बायो डीजल के लिए खाद्यान्न का उपयोग होने और मोटे अनाज के इस्तेमाल को बढ़ावा न मिलने के कारण भूख का अभिशाप बढ़ता हुआ दिखाई दे सकता है। उल्लेखनीय है कि अब भी सरकार सार्वजनिक वितरण प्रणाली के जरिये गरीबी रेखा से नीचे रह रहे देश के 6.52 करोड़ परिवारों को और गरीबी रेखा से ऊपर रह रहे आठ करोड़ परिवारों को रियायती दरों पर खाद्यान्न की आपूर्ति कर रही है। अब प्रस्तावित विधेयक के नए प्रारूप के मुताबिक, खाद्य सुरक्षा की छतरी में आने वाले हर व्यक्ति को तीन रुपये प्रति किलो चावल, दो रुपये प्रति किलो गेहूं और एक रुपया प्रति किलो मोटा अनाज–इस तरह कुल पांच किलो अनाज प्रतिमाह उपलब्ध कराना सुनिश्चित किया गया है। इस विधेयक में ग्रामीण क्षेत्र की 75 फीसदी और शहरी क्षेत्र की 50 फीसदी आबादी को शामिल करने का लक्ष्य रखा गया है।

गरीब जनता को रियायती दर पर अनाज उपलब्ध कराने की योजना ठीक है, लेकिन इसके लिए खाद्यान्न वितरण की जिस सार्वजनिक प्रणाली को आधार बनाया जा रहा है, वह भ्रष्टाचार के कारण जर्जर हो चुकी है। लिहाजा केंद्र सरकार को इस दिशा में सोच–समझकर आगे बढ़ना होगा।

खाद्य सुरक्षा के लिए जिस सार्वजनिक वितरण प्रणाली को माध्यम बनाना तय किया गया है, उसके तहत कारगर वितरण व्यवस्था के बारे में कई चिंताएं हैं। गौरतलब है कि 1951 में जब खाद्यान्न की भारी कमी हुई थी और सरकार को भारी मात्रा में विदेशों से अनाज आयात करना पड़ा था, तब उसने रियायती मूल्यों पर जरूरतमंदों तक

खाद्यान्न पहुंचाने के उद्देश्य से पीडीएस की शुरुआत की थी। इसके पीछे सरकार की एक मंशा जमाखोरों–कालाबाजारियों को नियंत्रित करने की भी रही है। यह दुखद है कि जरूरतमंद तक खाद्यान्न पहुंचाने की यह योजना अब तक भ्रष्टाचार में लिप्त होकर निराशाजनक बनी हुई है। सर्वेक्षण बताते हैं कि भ्रष्ट अधिकारियों, बेईमान दुकानदारों, धोखेबाज ट्रांसपोर्टरों और लालची दलालों के बीच एक मजबूत गठजोड़ के कारण यह व्यवस्था मृतप्राय हो गई है। सुप्रीम कोर्ट की ओर से पीडीएस की खामियों की जांच के लिए न्यायमूर्ति डीपी वाधवा की अध्यक्षता में गठित एक सदस्यीय आयोग की रिपोर्ट में कहा गया है कि इस व्यवस्था के तहत राशन सामग्री के बाजार में कदम–कदम पर खामियां हैं।

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (कैग) द्वारा कराई गई जांच में यह बात सामने आई है कि 40 फीसदी जरूरतमंदों को राशन कार्ड नहीं दिया जाता और राशन कार्ड पाने वालों में 90 फीसदी को खाद्य सामग्री नियमित रूप से नहीं मिलती। नेशनल सैंपल सर्वे द्वारा जारी एक रिपोर्ट भी कहती है कि सरकार की पीडीएस व्यवस्था में भारी भ्रष्टाचार है। राशन में मिलने वाला 60 फीसदी गेहूं और 20 फीसद चावल गरीबों तक पहुंच ही नहीं पाता। यह स्थिति तब है, जब सिर्फ 35 करोड़ लोगों को पीडीएस के तहत सस्ता अनाज उपलब्ध कराया जा रहा है। पर जब सरकार खाद्य सुरक्षा कानून लागू करने के बाद देश की आबादी के करीब 67 फीसदी यानी 80 करोड़ से अधिक लोगों को सस्ता अनाज इस प्रणाली के जरिये उपलब्ध कराएगी, तो खाद्य सब्सिडी का दुरुपयोग बढ़कर दोगुने से अधिक हो जाने की आशंका रहेगी।

ऐसे में, पीडीएस में आमूलचूल परिवर्तन की कवायद शुरू होनी चाहिए। पीडीएस में व्याप्त भ्रष्टाचार की समस्या से मुक्ति के लिए केंद्र प्राथमिकता के आधार पर कंप्यूटरीकरण करे और सभी राज्यों के लिए एक समान सॉफ्टवेयर विकसित किया जाए। खासकर आदिवासी बहुल और सूखा प्रभावित क्षेत्रों में यह प्रणाली अधिक सुदृढ़ बनाई जानी चाहिए। इसके अलावा खाद्यान्न उत्पादकता बढ़ाने पर भी ध्यान केंद्रित करना होगा। अगर सरकार खाद्यान्न आयात के लिए अंतरराष्ट्रीय बाजार में जाती है, तो फिर वैश्विक कीमतों पर खाद्यान्न खरीदना होगा, जिससे लागत बढ़ना तय है। खाद्य सुरक्षा की वर्तमान जरूरतों की दृष्टि से वर्तमान खाद्यान्न भंडार पर्याप्त है, लेकिन भविष्य में खाद्यान्न की बढ़ती जरूरतों के लिए रणनीतिक प्रयास जरूरी हैं।

पीडीएस व्यवस्था को सुधारने से संबंधित सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिया गया यूनिक आइडेंटिफिकेशन (यूआईडी) के इस्तेमाल संबंधी सुझाव भी महत्वपूर्ण है। सरकार को चाहिए कि वह खाद्य सब्सिडी को संबंधित लाभार्थी के बैंक खाते में हस्तांतरित करने की डगर पर भी तेजी से आगे बढ़े। खाद्य सुरक्षा कानून को असरकारी बनाने के लिए यह भी जरूरी होगा कि सार्वजनिक सेवाओं को समयबद्ध तरीके से उपलब्ध कराने संबंधी जवाबदेही विधेयक, 2011 को संसद द्वारा शीघ्र पारित किया जाए और पीडीएस व्यवस्था से जुड़े हुए ऐसे सरकारी अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए दंड का प्रावधान हो, जिनकी लापरवाही के कारण भूखे लोगों तक खाद्यान्न नहीं पहुंच पाता। कारगर खाद्य सुरक्षा कानून ही भूखे पेट लोगों को मुस्कराहट देने वाले उपयोगी कानून के रूप में रेखांकित हो सकेगा।

गरीब जनता को रियायती दर पर अनाज उपलब्ध कराने की योजना ठीक है, लेकिन इसके लिए खाद्यान्न वितरण की जिस सार्वजनिक प्रणाली को आधार बनाया जा रहा है, वह भ्रष्टाचार के कारण जर्जर हो चुकी है। लिहाजा केंद्र सरकार को इस दिशा में सोच–समझकर आगे बढ़ना होगा। ❑

पीडीएस में आमूलचूल परिवर्तन की कवायद शुरू होनी चाहिए। पीडीएस में व्याप्त भ्रष्टाचार की समस्या से मुक्ति के लिए केंद्र प्राथमिकता के आधार पर कंप्यूटरीकरण करे और सभी राज्यों के लिए एक समान सॉफ्टवेयर विकसित किया जाए। खासकर आदिवासी बहुल और सूखा प्रभावित क्षेत्रों में यह प्रणाली अधिक सुदृढ़ बनाई जानी चाहिए। इसके अलावा खाद्यान्न उत्पादकता बढ़ाने पर भी ध्यान केंद्रित करना होगा।

अगर सरकार खाद्यान्न आयात के लिए अंतरराष्ट्रीय बाजार में जाती है, तो फिर वैश्विक कीमतों पर खाद्यान्न खरीदना होगा, जिससे लागत बढ़ना तय है। खाद्य सुरक्षा की वर्तमान जरूरतों की दृष्टि से वर्तमान खाद्यान्न भंडार पर्याप्त है, लेकिन भविष्य में खाद्यान्न की बढ़ती जरूरतों के लिए रणनीतिक प्रयास जरूरी हैं।

आखिर कैसे होगी गंगा-यमुना...

नदियों के एक बुनियादी पक्ष को प्रायः भुला दिया जाता है कि इनका मुख्य जलग्रहण क्षेत्र कहां है और वहां क्या हो रहा है। गंगा और यमुना जैसी हिमालय से निकलने वाली नदियों के संदर्भ में यह सवाल और भी महत्वपूर्ण है। पर्वतीय जल–ग्रहण क्षेत्रों से संबंधित नीतियों को बदले बगैर इस दिशा में ज्यादा आगे जाना संभव नहीं है।

■ भारत डोगरा

यह अच्छी बात है कि देर से ही सही, लेकिन नदियों की रक्षा को लेकर समाज और सरकार दोनों स्तरों पर अब गंभीरता नजर आने लगी है। यह नई जागृति संकटग्रस्त नदियों को बचाने में कहां तक सफल होगी, यह काफी कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि जिस संकीर्ण सोच और स्वार्थों के कारण नदियों के लिए खतरे उत्पन्न हुए, उनसे ऊपर उठकर इनकी रक्षा के प्रयास होते हैं या नहीं।

नदियों के एक बुनियादी पक्ष को प्रायः भुला दिया जाता है कि इनका मुख्य जलग्रहण क्षेत्र कहां है और वहां क्या हो रहा है। गंगा और यमुना जैसी हिमालय से निकलने वाली नदियों के संदर्भ में यह सवाल और भी महत्वपूर्ण है। पर्वतीय जल–ग्रहण क्षेत्रों से संबंधित नीतियों को बदले बगैर इस दिशा में ज्यादा आगे जाना संभव नहीं है।

पहाड़ों पर चोट

उत्तराखंड और हिमाचल प्रदेश में गंगा और यमुना का बड़ा जल–ग्रहण क्षेत्र है। वनों की रक्षा के लिए यहां जन–आंदोलनों के अलावा सरकारी स्तर पर कुछ प्रेरणादायक प्रयास भी हुए हैं, पर कुल मिलाकर इन क्षेत्रों के वनों और हरियाली में कमी आई है। जितने वृक्ष चिपको आंदोलन ने बचाए होंगे उससे अधिक बांध निर्माण व उससे जुड़े अन्य निर्माण कार्यों के लिए काट दिए गए हैं। भावी योजनाओं का रुख भी पर्यावरण विनाश और विस्थापन की ओर ही है। विस्थापितों के पुनर्वास के लिए आगे और भी वन उजाड़ने पड़ सकते हैं। भू–रचना की दृष्टि से अस्थिर इन पर्वतमालाओं में भू–स्खलन पहले से गंभीर समस्या है। अनाप–शनाप ढंग से लागू की गई विकास परियोजनाओं ने अस्थिरता को बढ़ाया है। टिहरी बांध को उच्चतम स्तर पर सरकारी समितियों की सलाह के बावजूद बनाया गया। फिलहाल इन समितियों के द्वारा व्यक्त इस आशंका की ओर ध्यान खींचना जरूरी है कि टिहरी बांध किस तरह गंभीर आपदा का स्थल बन सकता है और इसके कारण गंगा में अचानक प्रलयकारी बाढ़ आ सकती है।

नहरें तभी निकालें

न केवल उस समय सरकारी मान्यता प्राप्त विशेषज्ञों की चेतावनी की अवहेलना की गई बल्कि उसके बाद सरकारी नियम–कानूनों को ताक पर रख कर दर्जनों नदियों पर बांध व सुरंग बांध

यह अच्छी बात है कि देर से ही सही, लेकिन नदियों की रक्षा को लेकर समाज और सरकार दोनों स्तरों पर अब गंभीरता नजर आने लगी है। यह नई जागृति संकटग्रस्त नदियों को बचाने में कहां तक सफल होगी, यह काफी कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि जिस संकीर्ण सोच और स्वार्थों के कारण नदियों के लिए खतरे उत्पन्न हुए, उनसे ऊपर उठकर इनकी रक्षा के प्रयास होते हैं या नहीं।

वनों की रक्षा के लिए यहां जन–आंदोलनों के अलावा सरकारी स्तर पर कुछ प्रेरणादायक प्रयास भी हुए हैं, पर कुल मिलाकर इन क्षेत्रों के वनों और हरियाली में कमी आई है। जितने वृक्ष चिपको आंदोलन ने बचाए होंगे उससे अधिक बांध निर्माण व उससे जुड़े अन्य निर्माण कार्यों के लिए काट दिए गए हैं।

परियोजनाओं को तेजी से आगे बढ़ाया गया। इसके लिए कच्चे अस्थिर पहाड़ों पर विस्फोटकों का उपयोग बहुत बड़े पैमाने पर किया गया। कई अन्य स्थानों पर भी खनन के विस्फोटों ने इतनी ही तबाही मचाई। इन कारणों से भू–स्खलन व अचानक आने वाली बाढ़ का खतरा बढ़ा है और यह पर्वतीय क्षेत्र में व इससे आगे बहने वाली गंगा, यमुना व इनकी सहायक नदियों के लिए बहुत चिंताजनक स्थिति उत्पन्न कर सकता है। ऐसा ही पर्यावरणीय विनाश गंगा की उन सहायक नदियों में भी हुआ है, जिनका जल–ग्रहण क्षेत्र नेपाल में है। मैदानी क्षेत्रों में प्रवेश करते ही ऐसी नदियों पर बैराज बनाकर उनसे सिंचाई के लिए नहरें निकाली जाती हैं। गंगा और यमुना दोनों के संदर्भ में यही हुआ है।

नहरें निकालते वक्त यह ध्यान रखना चाहिए कि नदी की पर्यावरणीय भूमिका सुरक्षित रखने के लिए, उसमें इतना पानी रहना जरूरी है कि जीव–जंतुओं और आसपास के गांवों के लिए जल–संकट उत्पन्न न हो। यदि इतना पानी आप नदी में नहीं छोड़ेंगे, तो नदी की रक्षा नहीं हो सकती। इस सिद्धांत का पालन करने के बाद ही नदी बचाने के प्रयास सफल हो सकते हैं और प्रदूषण भी नियंत्रित हो सकता है। नदी के प्राकृतिक प्रवाह के मार्ग में पर्याप्त पानी छोड़ने के बाद ही अन्य क्षेत्रों के लिए नहरें निकालने की अनुमति दी जा सकती है।

इसका अर्थ यह नहीं है कि नदी से दूर के क्षेत्रों की उपेक्षा हो। इन क्षेत्रों की जल–आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वहां वर्षा जल संरक्षण, वाटर हारवेस्टिंग और मेड़बंदी जैसे उपायों से बहुत कुछ किया जा सकता है। अतरू इस ओर अधिकतम ध्यान देना चाहिए और नदियों की मूल धारा से उतना ही पानी हटाना चाहिए जिससे उनकी पारिस्थितिकी पर प्रतिकूल असर न पड़े। नदियों से बालू व पत्थर की खुदाई और उनके आसपास

नदियों के बगैर भारत की कल्पना नहीं की जा सकती। वह जो हिन्दुस्तान है, हमारी मिट्टी है, हमारे लोग हैं, इस हिन्दुस्तान को नदियों की सिंचाई से ऊर्जा मिलती रही है। गंगा, यमुना, सतलुज, ब्रह्मपुत्र, गोदावरी, कावेरी, कृष्णा इन सभी नदियों के बगैर शायद हिन्दुस्तान की कल्पना नहीं की जा सकती है। यह सिर्फ पानी पीने के पानी या सिंचाई के लिए जल का सवाल नहीं है, बल्कि यह देश की आस्था, देश की विरासत और संस्कृति का भी विषय है।

सुझाव : सरकार को पल्स पोलियो अभियान की तरह नदियों की स्वच्छता का अभियान चलाया जाना चाहिए।

– रविशंकर प्रसाद

पूरी दुनिया में ऐसी कोई और नदी नहीं है जिसके नाम से किसी देश, किसी सभ्यता को नाम दिया गया हो। लेकिन आज बड़ा सवाल यह है कि हम गंगा को अपवित्र करते हैं, यमुना को अपवित्र करते हैं और दोष देते हैं सरकार को। इसमें सारे रंग की सरकारें हैं जिसके हिस्से में जो आया, उसने गंगा और यमुना के लिए कार्य नहीं किया। हमारे पाखंड ने गंगा को गंदा किया।

सुझाव : हमें नदियों की स्वच्छता के प्रति लोगों को जागरूक करना पड़ेगा तथा अपनी जिम्मेदारी स्वीकार करनी होगी। सिर्फ दूसरों को या सरकारों को दोष नहीं देने से काम चलेगा।

– तरुण विजय

प्रयाग में दो नदियों का संगम नहीं होता बल्कि दो संस्कृतियां भी मिलती है। जिसे गंगा-जमुनी संस्कृति कहते हैं। आज गंगा-यमुना पर खतरा है तो वह खतरा गंगा-जमुनी संस्कृति पर है। विश्व में सबसे ज्यादा साहित्य गंगा पर लिखा गया है। श्रीमद्भगवद पुराण के 34वे अध्याय के श्लोक में लिखा है कि गंगा में मल–मूत्र नहीं डालना चाहिए। अगर ऐसा होता है तो उसे एक कल्प पर्यन्त नर्क भोगना पड़ेगा।

सुझाव : गंगा में सीवेज एवं मल–मूत्र डालने, रासायनिक कचरा डालने को दंडनीय अपराध बनाया जाए। यह सिर्फ निजी उद्यमियों के लिए ही नहीं बल्कि सरकारी एजेंसियों के लिए भी हो।

– डॉ. रामप्रकाश

स्टोन क्रशर का कार्य इधर तेजी से बढ़ा है। इसे नियंत्रित करना भी जरूरी है। नदी व उसके आसपास के बालू की उसका जल–स्तर बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका है। थोड़ा–बहुत बालू लेने से तो क्षति नहीं होगी पर जिस तरह बालू–माफिया भारी मशीनों के जरिये नदियों से बालू निकाल रहे हैं उससे अनेक नदियों के अस्तित्व के लिए संकट उत्पन्न हो रहा है। नदियों के आसपास की बलुअर जमीन को जल–संरक्षण के लिए खुला छोड़ना चाहिए। इसपर सीमेंट–कंक्रीट के निर्माण कार्य नहीं होने चाहिए।

हर जहर का तोड़

जैविक खेती को वैसे तो सभी गांवों में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, पर नदियों के आसपास के गांवों में इसका एक विशेष महत्व यह है कि इससे कीटनाशक दवाओं व रासायनिक खाद का प्रदूषण नदियों में नहीं पहुंचेगा। इसके साथ ही किसानों का खर्च कम होगा और उन्हें स्वास्थ्य व पोषण के लाभ भी मिलेंगे। शहरों में सीवेज को ठिकाने लगाने के लिए एक नई सोच यह हो सकती है कि विभिन्न कालोनियों में विकेंद्रित प्रयास हो। गंदगी का उपचार कालोनी के स्तर पर ही किया जाए, ताकि इससे खाद और सिंचाई का पानी प्राप्त करके इनका उपयोग कालोनी की हरियाली बढ़ाने में किया जा सके। कम से कम नई कालोनियों के नियोजन में तो इस सोच को प्रोत्साहित किया ही जा सकता है। दूसरा तरीका ऐसे नालों में गंदगी बढ़ाने का है, जो नदियों में न गिरें और कहीं अलग ही उनके उपचार की व्यवस्था की जाए। कालोनी स्तर की विकेंद्रीकृत सोच इस केंद्रीकृत उपाय से बेहतर रहेगी। उद्योगों की विषैली गंदगी के उपचार के विशिष्ट तौर–तरीकों के लिए उन्हें विशेष व्यवस्था करने को कहा जाना चाहिए। सभी स्तरों पर लोगों को जोड़ने व उनकी उत्साहवर्धक भागीदारी प्राप्त करने का प्रयास होना चाहिए। इसके लिए विकेंद्रीकृत तौर–तरीके हमेशा ज्यादा कारगर साबित होंगे। ❑

:: सदस्यता संबंधी सूचना ::

मान्यवर,,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीघ्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है :–

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	150 रुपए	1500/– रुपए
अंग्रेजी	150 रुपए	1500/– रुपए

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

पता : **स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22**

गंगा चिंतन

जहां बांध बनने के समय चेतना नही थी वहां पर अब लोग खड़े हो रहे है। हां कहीं–कहीं पर प्रभावित बांध के पक्ष में भी खड़े हुए हैं और फिर भुगत रहे हैं। किंतु यह स्पष्ट है कि बांधों से कोई रोजगार नहीं बढ़ा है। पर्यावरण एवं वन मंत्रालय की स्वीकृतियों के अनुसार बांध कंपनियां ही अपनी रिपोर्ट बना कर भेज देती हैं। बाकी पर्यावरणीय और पुनर्वास के पक्ष की किसी शर्त का पालन होता है या नहीं इसकी कोई निगरानी नहीं। बस सरकारी कागजात के पुलिंदे बढ़ते जा रहे हैं।

■ **विमल भाई**

करोड़ों लोगों की आस्था का केन्द्र गंगा को मात्र बिजली बनाने का हेतु मान लिया जाए? गंगा के शरीर पर बांध बनाकर गंगा के प्राकृतिक स्वरूप को समाप्त किया जा रहा है। कच्चे हिमालय को खोद कर सुरंगे बनाई जा रही हैं। जिससे पहाड़ी जनजीवन अस्त–व्यस्त हो गया है। गंगा नदी नहीं अपितु एक संस्कृति है। पावन, पतितपावनी, पापतारिणी गंगा को मां का स्थान ना केवल हमारे पुराणों में दिया गया है वरन् गंगाजी हमारी सभ्यता की भी परिचायक हैं।

वैसे तो गंगा का पूरा आधार–विस्तार अंतरराष्ट्रीय सीमाओं को पार करता है। भारत देश में भी गंगा उत्तराखंड से उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल में सागर से मिलती है। हम यदि गंगा की उपत्याकाओं और उनके जल संग्रहण क्षेत्र को भी समेटे तो हरियाणा–मध्य प्रदेश और उत्तर–पूर्व राज्यों को भी जोड़ना होगा। गंगा का उद्‌गम उत्तराखंड से होता है। इसलिए उत्तराखंड को गंगा का मायका भी कहा जाता है। मुश्किल है गंगा को उसके मायके में ही हत्या की स्थिति में लाया जा रहा है। गंगा क्षत–विक्षत हो रही है। कन्या भ्रूण हत्या पर कानून है। पर संस्कृति की पालक नदियों के रक्षण के लिए हमारे पास कोई सोच नहीं है।

ऐसे में हमें हम सबकी गंगा के उद्‌गम से लेकर ऋषिकेश–हरिद्वार तक की सीधी, सच्ची, साफ बेबाक पहाड़ से निकली सच्चाईयां समझने की आवश्यकता है और उसके लिए कदम उठाने की जरुरत है। गंगा के मायके में ही गंगा की दुर्दशा को समझने के लिये हमें गंगा के आधार को भी जानना होगा।

उत्तराखंड में गंगा एक तरफ गंगोत्री ग्लेशियर से निकलकर भागीरथी गंगा कहलाती है, दूसरी तरफ श्री बद्रीनाथ जी के पास से निकलकर विष्णुपदी अलकनन्दा गंगा कहलाती है। गंगा का तात्पर्य, उत्तराखंड में भागीरथी गंगा व विष्णुपदीगंगा अलकनंदा के पंच प्रयागों में मिलने वाली पांचों धाराओं के देवप्रयाग में मिलन के साथ पूरा होता है। ये पंचप्रयाग हैः– विष्णुप्रयाग (धौली–अलकनंदा) नन्दप्रयाग (नंदाकिनी–अलकनंदा) कर्णप्रयाग (पिंडर–अलकनंदा) रूद्रप्रयाग (मंदाकिनी–अलकनंदा) देवप्रयाग (अलकनंदा–भागीरथी)।

देवप्रयाग से नीचे की तरफ मैदान में पहुंचने से पहले गंगा के किनारे रिवर राफ्टिंग के बहुत सारे पर्यटक कैंप होते हैं जो कि राज्य को राजस्व भी खूब देते हैं और पर्यटकों से स्थानीय लोगों को भी कुछ आमदनी हो जाती है। मगर इससे बड़ी आमदनी ऋषिकेश–हरिद्वार में गंगा के किनारे बने बड़े–बड़े मॉल रूपी आश्रमों व उसमें बैठे तथाकथित संतों की होती है। जो लोगों की गंगा के प्रति श्रद्धा और आस्था को स्वयं की पूजा अर्चना में बदलते हैं। इनमें ये भी होड़ होती है कि किसके पास कितने विदेशी अतिथि हैं।

श्रद्धा से सम्मोहित आने वाले विदेशी आजकल इन गंगा संतों के साथ इंटरनेट पर ही जुड़ जाते हैं। कई आश्रमों मे तो बकायदा प्रचार विभाग को देखने वाली कोई गोरी बहन ही होती है। गंगा के किनारे से बढ़कर गंगा के बीच तक में अपने आश्रम का भव्य कब्जा जमाए हुए हैं। ये आश्रम गंगामहाआरतियों का आयोजन करते हैं और राजनेताओं को बुलाकर कानूनों के उलंघन को सही ठहरवा लेते है। हां इन सब में गंगा के प्रति सच्चे समर्पण भाव से कार्य करने वाले संत नजर नहीं आते क्योंकि वो ना तो ढोंगी हैं और न प्रचार करते हैं।

आजकल गंगा पर होने वाले सेमिनारों, भजनों, एनजीओ के प्रोजेक्टों की भरमार हो रही है। सारे संतों–महंतों का गंगा के सवाल पर बोलना, ऋषिकेश में महाआरती का आयोजन करना एक खूब प्रचलित खेल बन गया है, किंतु गंगा की दुर्दशा में कोई परिवर्तन नहीं आया। सरकारें गंगा के नाम पर जमकर दुकानें चला रही हैं।

केन्द्र सरकार ने राष्ट्रीय गंगा नदी प्राधिकरण बनाया और उत्तराखंड की पूर्ववर्ती सरकार ने निर्मल गंगा अभियान की दुकान चलाई। जिसमें विधायक निधियों का भी इस्तेमाल किया गया वो बात और है कि सारा पैसा किसी एक

बांध के एक ठेके में समेट लिया होगा। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी गंगा खूब बिक रही है। विश्वबैंक ने राष्ट्रीय नदी गंगा प्राधिकरण में अरबों रुपये गंगा सफाई के लिये दिया और साथ में ही गंगा की सबसे बड़ी हत्यारी बांध कंपनी टीएचडीसी को अलकनंदागंगा पर बांध बनाने के लिए भी करोड़ों रुपये का उधार दिया है। गंगा सफाई का धंधा मजे का है। निर्मलता की आड़ में भी खाओ और तथाकथित विकास के नाम पर बांध बना कर भी खाओ।

आइए गंगा पर बांधों की स्थिति देखते हैं। गंगोत्री से नीचे भागीरथी गंगा पर पहला बांध पड़ता है मनेरीभाली चरण एक फिर चरण दो फिर विशालकाय टिहरी बांध, फिर कोटेश्वर बांध और फिर कोटलीभेल चरण एक 'अ' जो कि निर्माणाधीन है। इसके बाद अलकनंदागंगा से देवप्रयाग में भागीरथी गंगा का संगम होता है। जहां से आगे वो सिर्फ गंगा के ही नाम से जानी जाती है। आध्यात्म और धार्मिक कथा जो भी हो गढ़वाल में एक लोककथा के अनुसार भागीरथी गंगा को बहु तथा अलकनंदागंगा को सास कहा गया है। सास गंगा में जल का 70 प्रतिशत तथा बहु 30 प्रतिशत प्रवाह करती है। इसलिए कथा यह भी कहती है कि सास बहु को दबा कर रखती है।

अलकनंदागंगा की प्रमुख सहायक गंगाओं पर भी बांधों की श्रृखलाएं हैं। स्वयं अलकनंदागंगा पर पहला निजी बांध विष्णुप्रयाग है जयप्रकाश इंडस्ट्री ने बनाया है। अनूप शहर का रहने वाला यह जयप्रकाश गौड़ परिवार टिहरी बांध से उपजा और फैला है। अलकनंदागंगा पर पहला प्रयाग विष्णुप्रयाग है जो कि धौलीगंगा और अलकनंदागंगा के संगम से बनता है। अब संगम बांध के नाम से ही जाना जा रहा है। इसके बाद एनटीपीसी तपोवन विष्णुगाड परियोजना बना रही है। फिर नीचे आएं तो टीएचडीसी विष्णुगाड पीपलकोटी परियोजना बनाना चाहती है। उसके नीचे उत्तराखंड जल विद्युत की दो परियोजनाएं विचारणीय है और फिर श्रीनगर में आंध्र की जीवीके कम्पनी 330 मेगावाट की परियोजना बना रही है।

इसके बाद एनएचपीसी की कोटलीभेल चरण 1 'ब' और देव प्रयाग से नीचे कोटलीभेल चरण दो परियोजना जिसकी वन स्वीकृति अभी रुकी हुई है।

धौलीगंगा पर बांध बन रहे है, नई योजनाओं पर भी काम चालू है। नंदाकिनी प्यारी सी नन्ही सी गंगा है पर पूरी बंध ही गई है। मंदाकिनी के तो और भी बुरे हाल हुये है, लंबा संघर्ष चला, दमन भी खूब हुआ है। बस एकमात्र पिंडरगंगा पर अभी तक कोई बांध नही है। पर बांध तैयारी चल रही है। लोगों का संघर्ष भी जारी है। इन सब गंगाओं पर बांधों की कथाएं अलग–अलग है। लोग बांध के खिलाफ लड़ रहे है। जहां बांध बनने के समय चेतना नही थी वहां पर अब लोग खड़े हो रहे है। हां कहीं–कहीं पर प्रभावित बांध के पक्ष में भी खड़े हुए हैं और फिर भुगत रहे हैं। किंतु यह स्पष्ट है कि बांधों से कोई रोजगार नहीं बढ़ा है।

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय की स्वीकृतियों के अनुसार बांध कंपनियां ही अपनी रिपोर्ट बना कर भेज देती हैं। बाकी पर्यावरणीय और पुनर्वास के पक्ष की किसी शर्त का पालन होता है या नहीं इसकी कोई निगरानी नहीं। बस सरकारी कागजात के पुलिंदे बढ़ते जा रहे हैं।❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते हैं कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :–

संपादक

स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

अभिशाप न बने इंटरनेट का वरदान

आधुनिकता की दौड़ में अग्रणी रखने हेतु मां–बाप सोचते हैं कि उनका बच्चा यदि अभी से इंटरनेट के विषय में प्रशिक्षित एवं दक्ष हो जाएगा तो आगे करियर निर्माण में आसानी हो जाएगी लेकिन इस होड़ में वह यह नहीं देख पाते हैं कि इन्टरनेट पर अच्छी जानकारी के साथ–साथ बहुत कुछ अवांछनीय और आपत्तिजनक भी परोसा जा रहा है और उम्र के जिस मोड़ पर उनके बच्चों को इन्टरनेट से खेलने की आजादी मिल रही है वह उनके भविष्य पर कैसे प्रभाव डालेगा?

■ पंकज चतुर्वेदी

दुनिया में इस समय सूचना और संचार क्रांति की अंधी दौड़ मची है। दुर्भाग्य से इसके दुष्प्रभाव एवं दुष्परिणामों ने कहीं न कहीं भारतीय बचपन को भी अपनी चपेट में लिया है। हैरानी और चिंता इस बात की है कि आज अभिभावक

इंटरनेट के मायाजाल को बच्चे के उन्नत भविष्य की प्रगति का सबसे बड़ा पथ समझ रहे हैं। इस मामले में आशय तकनीक के विरोध से बिल्कुल नहीं है, क्योंकि बिना उन्नत संचार एवं सूचना तकनीक के आज दुनिया में किसी का गुजारा नहीं है।

किसी भी देश के विकास के लिए इन दोनों कारकों की उत्तम श्रेणी अति आवश्यक है। जो देश इस उन्नत तकनीक की क्रांति से दूर हैं, वहां आम आदमी की जीवन शैली एवं स्तर, तकनीकी रूप से दक्ष देशों की तुलना में बहुत पीछे एवं नीचे है किन्तु जिस तरह से देश का हर आयु वर्ग विशेषकर बच्चे और युवा इसके मकड़जाल में जकड़े हुए हैं, वह चिंतनीय है। संभवतः समाज एवं संस्कृति के साथ–साथ सरकार के कर्ता धर्ता भी बच्चों के परिप्रेक्ष्य में इन्टरनेट के प्रति घोर दिलचस्पी के चलते उसके घातक परिणामों से अनिभज्ञ नजर आ रहे हैं।

छोटे–छोटे स्कूलों तक में आज बिना कम्प्यूटर के पढ़ाई नहीं हो पा रही है। किन्तु नौनिहालों का कम्प्यूटर और उससे आगे इंटरनेट पर लंबे समय तक टिके रहना बहुत नुकसानदायक भी है। हालांकि अपने देश की उन्नत संस्कृति ने अभी हमें बहुत हद तक विदेशों के सामाजिक– सांस्कृतिक प्रदूषण से बचाकर रखा है किन्तु इंटरनेट के लगातार फैलते जाने के कारण देश की संस्कृति का सुरक्षित रहना मुश्किल होता जा रहा है और इसमें इंटरनेट खास भूमिका अदा करता दिख रहा है।

दरअसल अपने बच्चे को आधुनिकता की दौड़ में अग्रणी रखने हेतु मां–बाप सोचते हैं कि उनका बच्चा यदि अभी से इंटरनेट के विषय में प्रशिक्षित एवं दक्ष हो जाएगा तो आगे करियर निर्माण में आसानी हो जाएगी लेकिन इस होड़ में वह यह नहीं देख पाते हैं कि इन्टरनेट पर अच्छी जानकारी के साथ–साथ बहुत कुछ अवांछनीय और आपत्तिजनक भी परोसा जा रहा है और उम्र के जिस मोड़

इंटरनेट के दुरुपयोग की जहां तक बात है तो इस समस्या से निपटने के लिए देश में अब तक कोई कारगर रणनीति निर्मित नहीं हुई है, क्योकि हम इसकी भयावहता का अंदाज ही नहीं लगा पा रहे हैं। देश के सायबर कानून इतने कमजोर हैं कि अव्वल तो कोई उनकी गिरफ्त में आसानी से आ ही नहीं पाता है और यदि आ भी जाये, तो जमानत का लाभ लेकर छूट जाता है।

पर उनके बच्चों को इन्टरनेट से खेलने की आजादी मिल रही है वह उनके भविष्य पर कैसे प्रभाव डालेगा? क्योंकि कभी–कभी किशोरवय के बच्चे उत्सुकता में अनचाही साइट्स खंगालने लगते हैं जिसका दुष्प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर पड़े बिना नहीं रहता। इस मामले में बात सिर्फ अश्लीलता की ही नहीं है अपितु मनोवैज्ञानिक एवं शाररिक दुष्प्रभावों की भी है।

बिल गेट्स के माइक्रोसॉफ्ट के आंकलन पर यदि विश्वास किया जाए तो आज भारत के लगभग पचास फीसद से अधिक बच्चे एवं युवा इंटरनेट से सरोकार रखते हैं। वर्तमान में भारतीय अभिभावकों की परिभाषा भी परिवर्तित हुई है। ज्यादातर मध्यवर्गीय घरों में अब मां–बाप दोनों काम पर जाते है और संयुक्त परिवार रूपी संस्था का विघटन हुए लंबा अरसा हो चुका है। सो बच्चा स्कूल से आते ही कमप्यूटर के सामने बैठ जाता है। यानी पढ़ाई और कम्प्यूटर के साथ पूरा समय गुजर जाने के बाद खेलकूद, परिवार, पूजा–पाठ या अन्य शारीरिक गतिविधियों के लिए उसकी दिनर्चया में कोई स्थान शेष नहीं रहता।

इंटरनेट के दुरुपयोग की जहां तक बात है तो इस समस्या से निपटने के लिए देश में अब तक कोई कारगर रणनीति निर्मित नहीं हुई है, क्योकि हम इसकी भयावहता का अंदाज ही नहीं लगा पा रहे हैं। देश के सायबर कानून इतने कमजोर हैं कि अव्वल तो कोई उनकी गिरफ्त में आसानी से आ ही नहीं पाता है और यदि आ भी जाये, तो जमानत का लाभ लेकर छूट जाता है।

हालांकि इस दिशा में 2008 के कानून में शक्ति और सख्ती के उद्देश्य से

इंटरनेट की दुनिया में सायबर बुलिंग बहुत सामान्य सी बात है। कोई किसी को किसी भी तरह का गलत या अश्लील कुछ भी संदेश दे तो वह सायबर बुलिंग कहलता है। आज जो भी बच्चे इन्टरनेट से जुड़े हैं, उनमें आधा से ज्यादा सायबर बुलिंग का शिकार हैं।

कुछ संशोधन किये गए इसके बावजूद देश के साइबर कानून में किसी प्रकार की कड़ी सजा का प्रावधान न होने से अपराधी के मन में इस कानून व उसके संभावित दंड का कोई भय नजर नहीं आता। यही कारण है कि इन दिनों देश में इन्टरनेट से सम्बन्धित अपराधों की अधिकता बढ़ती जा रही है।

तकनीक का यह मंत्र बूमरेंग की भांति वापस पलटकर हमें ही क्षति पहुंचा रहा है। इंटरनेट की दुनिया में सायबर बुलिंग बहुत सामान्य सी बात है। कोई किसी को किसी भी तरह का गलत या अश्लील कुछ भी संदेश दे तो वह सायबर बुलिंग कहलता है। आज जो भी बच्चे इन्टरनेट से जुड़े हैं, उनमें आधा से ज्यादा सायबर बुलिंग का शिकार हैं।

यह बात और है कि इनमें से पीड़ित और आरोपी दोनों को ही सही मायनों में यह समझ नहीं है कि वे जो कर रहे हैं, वह सायबर बुलिंग है और सायबर कानून के तहत में यह गंभीर अपराध है। हम देश के बच्चों और अन्य अपराधों के संबंध में बाल अपराध कानून की बात करते हैं क्योंकि यह सामजिक अवधारणा है कि इस आयु समूह के लोगों को यदि सही समय पर सुधार मिल जाये तो शायद उनके भविष्य की दिशा अपराध की ओर प्रवृत्त नहीं होगी लेकिन देखा जाए तो उन पर कड़ी नजर न रखते हुए हम अपनी ही लापरवाही के कारण अपने बच्चों को सायबर बुलिंग जैसे अपराध का भागी बना रहें हैं।

गूगल का मानना है कि वर्तमान में दुनिया में लगभग दो अरब लोग इंटरनेट से जुड़े है और भविष्य में यह आंकड़ा सात अरब तक होने की उम्मीद है। यह आंकड़ा यूं तो सूचना प्रौद्योगिकी की उत्तरोत्तर प्रगति की ओर इशारा कर रहा है लेकिन इस चिंता को भी बढ़ाता है कि हमारे देश के नौनिहाल कहीं उचित जानकारी के अभाव या संवेदनशील उम्र के पड़ाव पर इसके गलत इस्तेमाल की दिशा में न बढ़ जाएं। क्योंकि जनसंख्या के हिसाब से इन्टरनेट के नए उपभोक्ताओं में भारतीयों की अधिकाधिक भागीदारी तय है। इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि गूगल भविष्य के लिए यह नीति निर्धारित करने जा रहा है ताकि अधिक से अधिक भारतीय लोग गूगल के माध्यम से इन्टरनेट से जुड़ें।

ऐसे में बड़ा प्रश्न यह है कि हम वैश्विक स्तर की सूचना प्रोद्योगिकी पर न रोक लगा सकते हैं और न उससे मुंह मोड़ सकते हैं किन्तु अपने बच्चों एवं युवाओं की भागीदारी इस माध्यम में कहां कितनी हो, जागरूक रहते हुए यह तो तय कर ही सकते हैं। पारिवारिक स्तर पर जैसे हम बच्चों की जीवनचर्या निर्धारित करते हैं, वैसे ही हमें इन्टरनेट पर उनका दृष्टि क्रम भी निर्धारित करना होगा अन्यथा इन्टरनेट का कचरा जाने–अनजाने उनका दृष्टिकोण सदा के लिए दूषित कर कर सकता है और समय बीत जाने के बाद इसकी भरपाई असंभव होगी। बस इतना ध्यान रहे कि इंटरनेट का वरदान अभिशाप न बन जाए। ❑

भारतीय काल गणना का वैज्ञानिक आधार

अंग्रेजों के राज्य में जब अग्रेजों को लगा कि भारतीय सभ्यता, संस्कृति, दर्शन व धर्म इतना प्रगाढ़ है कि यहां के लोगों पर अधिक दिन तक शासन नहीं किया जा सकता तो जिस शिक्षा पद्धति द्वारा यहां कि सभ्यता, संस्कृति, दर्शन व धर्म पल्लवित एवं पुष्पित हो रहे हैं उसे ही दूषित कर दिया जावे तो यहां के लोगों का अपने धर्म संस्कृति व देश से प्रेम व लगाव समाप्त हो जावेगा और हम अधिक दिनों तक भारत में राज कर सकेंगे। इस कार्य में लार्ड मैकाले को लगाकर शिक्षा पद्धति को बदला गया. . .

■ डॉ. नन्द सिंह नरूका

भारत में प्रचलित काल गणना के सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान न होने के कारण प्रायः लोग कहते हैं कि यह कैसी तिथि गणना है जिसमें कभी तिथि घट जाती है तो कभी तिथि बढ़ जाती है, कभी वर्ष में एक माह बढ़ा दिया जाता है तो कभी माह का क्षय

हो जाता है। इससे तो अंग्रेजी कालगणना का कैलेण्डर अधिक उपयुक्त है जिसमें आसानी से काल का निर्धारण कर लिया जाता है।

परन्तु जब इसका विषद अध्ययन किया जाता है तो सम्पूर्ण भ्रम दूर हो जाता है और हम पाते है कि :– जब मानव जाति के इतिहास ने ऑखें खोली तो उसने भारत को एक सुसंस्कृत, सबल, समृद्ध राष्ट्र के रूप में देखा। शांति, समन्वय, सौहार्द और एकात्मता का संदेष यहीं से प्राप्त किया। भारतीय काल गणना के पंचांग के अनुरूप कुंभ आदि अमुक पर्व अमुक दिन अमुक स्थान पर समस्त भारत के नागरिक इक्कट्ठे होकर भारत की अखण्डता पर अमिट छाप लगा देते हैं। सूर्यग्रहण पर कुरूक्षेत्र, चन्द्रग्रहण पर काषी में गंगोत्तरी से लेकर सुदूर दक्षिण रामेष्वर और कन्याकुमारी तक जगन्नाथपुरी से लेकर द्वारकापुरी तक–खान–पान, वेष–भूषा प्रान्त–भाषा के भेद भुलाकर भारतीय संस्कृति की अनेकता में एकता को प्रमाणित करते हैं।

दासता का दुष्प्रभाव

दसवीं–ग्यारहवीं शताब्दी से अरब स्थान से इस्लाम की जो एक भीषण और विध्वंसक आँधी चली और जिस आँधी ने उसके पूर्व के सारे विष्व के ज्ञान भण्डार को नष्ट करने का बीड़ा उठाया उससे विष्व का प्राचीन ज्ञान समाप्त होने लगा। अलेक्झांड्रिया के विषाल ग्रंथालय को जलाने के लिए प्रस्तुत खलीफा उमर ने कहा कि–'' कुरान शरीफ में जो ज्ञान है यदि उसके अतिरिक्त इन ग्रन्थों में लिखा है तो वह निरर्थक है और यदि इन ग्रन्थों में भी वही ज्ञान है तो भी इन ग्रन्थों की आवष्यक्ता नही है'' इसलिए इन विषाल ज्ञान भण्डारों के ग्रन्थालयों को जला डाला। तक्षषिला, काषी, नालन्दा के ग्रन्थालय जलाये गये।

अंग्रेजों के राज्य में जब अग्रेजों को लगा कि भारतीय सभ्यता, संस्कृति, दर्षन व धर्म इतना प्रगाढ़ है कि यहां के लोगों पर अधिक दिन तक शासन नहीं किया जा सकता तो जिस षिक्षा पद्धति द्वारा यहां कि सभ्यता, संस्कृति, दर्षन व धर्म पल्लवित एवं पुष्पित हो रहे हैं उसे ही दूषित कर दिया जावे तो यहां के लोगों का अपने धर्म संस्कृति व देष से प्रेम व लगाव समाप्त हो जावेगा और हम अधिक दिनों तक भारत में राज कर सकेंगे। इस कार्य में लार्ड मैकाले को लगाकर षिक्षा पद्धति को बदला गया, मैक्समूलर को लगाकर वेद, इतिहास के भ्रमित अर्थ कर भारत को सवेरों गडरियों का असभ्य देष प्रचारित किया गया। जिसका दूर तक प्रभाव पड़ा और हम भ्रमित हो अपने इतिहास, सभ्यता एवं संस्कृति को भूल बैठे।

सृष्टि उत्पत्ति

ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में सृष्टि उत्पत्ति के पूर्व की स्थिति के बारे में बतलाया है– न सत् था न असत् था, न परमाणु था न आकाष, न मृत्यु थी न अमरत्व था, न दिन न रात था। स्पंदन शक्तियुक्त वह एक तत्व था। इच्छा शक्ति के प्रभाव से साम्यावस्था टूटी और अव्यक्त अवस्था से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति प्रारम्भ हुई।

काल गणना कब से प्रारम्भ हुई? आधुनिक काल के प्रख्यात ब्रह्माण्ड विज्ञानी स्टीफन हॉकिन्स ने अपनी पुस्तक The brief history of time समय का संक्षिप्त इतिहास में बतलाया है– सृष्टि और समय एक साथ प्रारम्भ हुए। ब्रह्माण्ड उत्पत्ति की कारणीभूत घटना आदि द्रव्य में बिग बैंग (महाविस्फोट) हुआ उससे अव्यक्त अवस्था से ब्रह्माण्ड व्यक्त अवस्था में आने लगा।

अब हम अलग–अलग प्रचलित काल गणनाओं का संक्षिप्त अध्ययन करते हैं– नव संवत्सर – अब्राहिम ने 1800 ई.पू. बेबीलोनिया में यहूदी धर्म के साथ, जरथ्रुट ने 1400 ई.पू. ईरान में पारसी धर्म के साथ, ईसा ने 4 ई. में इजराइल में ईसाई धर्म के साथ, मोहम्मद साहब ने 570 ई. में मक्का में मुस्लिम धर्म के साथ अपने–अपने वर्ष चलाये। विक्रम संवत् 57 ई.पू. व शक संवत् 78 ई० से प्रारम्भ हुए।इनमें से भारत में प्रचलित कुछ काल गणनाओं का हम विष्लेषण करते हैं।

हिज्री सन् – 570 ई. में मक्का में मोहम्मद साहब ने चलाया, चन्द्र वर्ष, यह काल गणना चन्द्रमा द्वारा पृथ्वी के परिक्रमण की अवधि द्वारा परिकलित की जाती है जिससे वर्ष में लगभग 356 दिन होते हैं। इस काल गणना से ऋतुओं का ज्ञान नहीं होता क्योंकि प्रति वर्ष यह 9–10 दिन पहले समाप्त हो जाता है, चाँद दिखने पर ही पर्व हैं उससे पूर्व किसी भी उत्सव की तिथि निष्चित रूप से नहीं बताई जा सकती।

ईसवी सन् – पृथ्वी का सूर्य के परिक्रमण से काल गणना, इस सूर्य मास से सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, ज्वार–भाटा, मासिक धर्म की सटीक गणना संभव नहीं। रात के 12 बजे की तारीख? जिससे अलग–अलग देषों में समय की भिन्नताएं पाई जाती है। 365 दिन 5 घण्टे, 52 मिनट, 45 सैकंड का वर्ष इससे प्रति वर्ष औसतन 7.25 मिनट कम का वर्ष हो रहा है। इसके कारण कालांतर में कैलेंण्डर को कई बार संषोधन करना पड़ा।

पष्चिम काल गणना का इतिहास– चिल्ड्रन्स ब्रिटानिका वोल्यूम 3 – 1964 में कैलेंण्डर के संदर्भ में 'मून' के लिए Luna शब्द Lunar month तथा Sun के लिए Sol शब्द Solar year 365 दिन 5 घण्टे 48 मिनट व 46 सैकण्ड है अर्थात् प्रति वर्ष 11 मिनट 14 सैकण्ड कम का वर्ष होता है।

रोमन कैलेण्डर – ईसा के जन्म से 753 वर्ष पूर्व रोम नगर में स्थापित हुआ। प्रारंभ में 10 माह मार्च से दिसम्बर के 10 माह का, तथा 304 दिन का वर्ष माना। राजा पिम्पोलियस ने दो माह Jonuarius और Februarius जोड़कर 12 माह का वर्ष बनाया। वह भी 355 दिन का ही था।

जुलियन कैलेण्डर – जुलियस सीजर ने इसे ठीक कर 365 ¼ दिन का नया कैलेण्डर बनाया तथा उस वर्ष पिछले वर्षों की कमी पूर्ति कर 445 ½ दिन का वर्ष माना। 31 व 30 दिन के माह किये। फरवरी 29 दिन की तथा Leap year में 30 दिन की रखी। अपने नाम से सातवाँ माह जुलाई 31 दिन का रखा।

सम्राट आगस्टस ने अपने नाम से 8 वे माह का नाम अगस्त जो 30 दिन का होता था 31 दिन का माना तथा फरवरी को 28 दिन का किया।

ग्रेगोरियन कैलेण्डर – 16वीं सदी में जूलियन कैलेण्डर में 10 दिन बढ़ गये। पोप ग्रेगोरी ने 1582 के 4 अक्टूबर को 15 अक्टूबर मानने के लिए कहा। ब्रिटेन में 1752 को 2 सितम्बर को 14 सितम्बर माना।

हम भगवान के 10 मुख्य अवतार मानते हैं जिनका कम निम्नानुसार है – मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्की जो वर्तमान विकास वाद से भी मेल खाता है यथा प्रारम्भ में जीव की उत्पत्ति पानी में मानी गई अर्थात् हमारे भगवान भी पानी में रहने वाले मत्स्य रूप में आये, उसके बाद जीव की उत्पत्ति जल–थल में मानी गई तो हमारे भगवान भी कूर्म रूप में अर्थात् जल–थल दोनों में रहने वाले आये इसी क्रम में अन्य अवतारों का आना वर्तमान विकासवाद के वैज्ञानिक आधार द्वारा हमारी प्राचीनता को प्रमाणित करना है।

भारत में काल गणनाः– प्राचीन काल से ही, चन्द्र मंडल, पृथ्वी मंडल, सूर्य मंडल, परमेष्ठी मंडल एवं स्वायम्भू मंडल के अनुरूप नक्षत्र, चन्द्र, पृथ्वी, सूर्य की गति के अनुरूप ब्राह्म, दिव्य, पित्र्य, प्राजापत्य, बार्हस्पत्य, नाक्षत्र, सौर, चान्द्र और सावन ये नौ वर्ष – गणनाएं भारतीय वाड़्मय में प्रसिद्ध है।

राजा परीक्षित महामुनि शुकदेव से पूछते हैं, काल का माप क्या है? तब शुकदेव बतलाते हैं– कि काल का सूक्ष्मतम रूप (अंष) परमाणु तथा महत्तम रूप (अंष)

ब्रह्म आयु है। उन्होंने काल के निम्नानुसार विभाजित रूप बतलाये, जो समय के सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा वृहत्तर रूप को बतलाते हैं:–

2 परमाणु = 1 अणु, 3 अणु = 1 त्रसरेणु, 3 त्रसरेणु = 1 त्रुटि, 100 त्रुटि = 1 वेध

3 वेध = 1 लव, 3 लव = 1 निमेष, 3 निमेष = 1 क्षण, 15 निमेष = 5 क्षण = 1 काष्ठा

30 काष्ठा = 1 कला, 30 कला = 1 मुहूर्त, 30 मुहूर्त = 1 दिन–रात/ 60 घड़ी/24 होरा/अहोरात्र

सप्ताह में दिनों के नाम – किस दिन कौन सा वार है इसका पृथ्वी से उत्तरोत्तर दूरी के आधार पर स्थित ग्रहों के क्रम की होरा के आधार पर नाम रखे गये इन होराओं का क्रम – शनि, गुरू, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध और चन्द्रमा। एक–एक घण्टे का अधिपति 3 बार 25 वीं अर्थात् प्रथम होरा अगले वार की होती है। उसी अनुरूप नाम रखे गये जो आज सभी काल गणनाओं में उसी की नकल है।

पक्ष – एक तिथि 12 अंष चलती है 15 दिन में 180 अंष चले शुक्ल पक्ष ... कृष्ण पक्ष का होना अंग्रेजी कलेण्डर में यह गणना संभव नहीं।

मास – 27 नक्षत्रों के परिक्रमण से बना जिसमें प्रत्येक नक्षत्र के चार चरण, नौ पाद होते हैं।

राशियाँ – मेष, वृष, मिथुन आदि ये सौर मास होते हैं जिनकी प्रत्येक माह में संक्रांतियां होती है। जो नक्षत्र मास भर सायंकाल से प्रातःकाल तक दिखाई दे तथा जिसमें चन्द्रमा पूर्णता प्राप्त करे उस नक्षत्र के नाम पर चन्द्रमास – यथा चैत्र, वैषाख आदि रखने का भी वैज्ञानिक आधार रहा है।

उतरायन/दक्षिणायन – पृथ्वी 23½ डिग्री उत्तर/पष्चिम में झुकी हुई है। जिससे दिन रात का छोटा–बड़ा होना पाया गया। सूर्य का कर्क रेखा से मकर को जाना दक्षिणायन व मकर रेखा से कर्क की ओर जाना उतरायन कहलाता है।

चन्द्र मंडल व पृथ्वी मंडल से चन्द्र मास, 12 माह के आधार पर 354 दिन का वर्ष माना, जिसमें 29.5 दिन औसत प्रति माह होते हैं।

पृथ्वी मंडल व सूर्य मंडल से सौर मास बना, इसमें वर्ष 365¼ दिन के लगभग माना गया।

दोनों में सामंजस्य बैठाने के लिए अधिक मास एवं क्षय मास के प्रावधान किये गये जिससे भारतीय काल गणना में ऋतुओं, सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण, ज्वार–भाटे, मासिक धर्म जैसी सटीक भविष्य गणनाएँ संभव हुई।

सूर्य मंडल व परमेष्ठी मंडल से मन्वन्तर काल माना गया जिसके चार युगों की 1 चतुर्युगी = 43,20,000 वर्ष की मानी गयी। इसके 10वाँ भाग अर्थात् 10 प्रतिषत को कलयुग; 5वाँ भाग 20 प्रतिषत को द्वापर; 30 प्रतिषत को त्रेता, व 40 प्रतिषत को सतयुग कहा गया।

1 मन्वन्तर = 71 चतुर्युगी+1 संध्यांष /सतयुग अर्थात् 30,67,20,000+ 17,28,000 वर्ष अर्थात् 30 करोड़ 84 लाख 28 हजार वर्ष का माना जाता है।

परमेष्ठी मंडल/स्वायम्भू मंडल – से कल्प बना जो = 14 मन्वन्तर +15 संध्यांष/सतयुग = 30,67,20,000'14 + 1728000'15 = 432 करोड़ वर्ष अर्थात् ब्रह्मा का एक दिन उतनी ही बड़ी रात अर्थात् ब्रह्मा का अहोरात्र = 864 करोड़ वर्ष का कहा गया।

ब्रह्मा का वर्ष = 864 * 360 = 31 खरब 10 अरब 40 करोड़ वर्ष का हुआ। ब्रह्मा की 100 वर्ष आयु अर्थात् ब्रह्माण्ड आयु = 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्ष हैं। जो वर्तमान वैज्ञानिकों द्वारा बतलाई पृथ्वी की आयु के लगभग ही है। जो इस काल गणना का वैज्ञानिक होने का प्रमाण है।

इस वक्त– 28वीं चतुर्युगी के कलियुग के 5114 वर्ष युक्त हो रहे हैं। अर्थात् सृष्टि संवत् 1 अरब 97 करोड़ 29 लाख 49 हजार 114 वर्ष समाप्त होने वाले हैं। 6वें मन्वन्तर के बाद 7वाँ मन्वन्तर चल रहा है। 7वें मन्वन्तर की 27 चतुर्युगी के बाद 28वीं चतुर्युगी चल रही है।

भारत की इस वैज्ञानिक काल गणना को इराक, फारस, टर्की तक में इल्मेहिन्दिया के नाम से जाना जाता है।

सत्ययुग में चैत्र शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को स्वयं भगवान विष्णु ने मत्स्य के रूप में अवतार धारण किया। हम भगवान के 10 मुख्य अवतार मानते हैं जिनका क्रम निम्नानुसार है – मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परषुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्की जो वर्तमान विकास वाद से भी मेल खाता है यथा प्रारम्भ में जीव की उत्पत्ति पानी में मानी गई अर्थात् हमारे भगवान भी पानी में रहने वाले मत्स्य रूप में आये, उसके बाद जीव की उत्पत्ति जल–थल में मानी गई तो हमारे भगवान भी कूर्म रूप में अर्थात् जल–थल दोनों में रहने वाले आये इसी क्रम में अन्य अवतारों का आना वर्तमान विकासवाद के वैज्ञानिक आधार द्वारा हमारी प्राचीनता को प्रमाणित करना है।

इसीलिए तो मार्कट्वेन जैसे लेखक को लिखना पड़ा– 'भारत उपासना पंथों की भूमि, मावन जाति का पालना, भाषा की जननी, इतिहास की माता पुराणों की दादी तथा परम्परा की परदादी है।'' ❑

एशिया के उदय पर ग्रहण

संसाधनों पर पकड़ युद्ध और शांति दोनों काल में अहम है। एशिया में प्राकृतिक संसाधनों की भू–राजनीतिक स्थिति दिन पर दिन गंभीर होती जा रही है। ऊर्जा आयात पर बढ़ती निर्भरता के परिणामस्वरूप नौसैनिक शक्ति पर जोर बढ़ता जा रहा है। इससे समुद्री मार्गों की सुरक्षा और आपूर्ति के बाधित होने का खतरा भी बढ़ रहा है। आज प्राकृतिक संसाधन विभिन्न एशियाई टकरावों की धुरी बने हुए हैं।

■ ब्रह्म चेलानी

एशिया फिर से पूरी दुनिया का ध्यान खींच रहा है, खासतौर पर दो शताब्दी के पतन के बाद अर्थव्यवस्था के पुनरुत्थान के कारण। हालांकि इस महाद्वीप का उभार प्राकृतिक संसाधनों की अतृप्त लालसा के साथ–साथ हो रहा है।

उत्तरी अमेरिका और यूरोप के विपरीत प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से एशिया बेहद विपन्न है। जहां तक भारत का सवाल है, इसकी स्थिति तो और भी खराब है। भारत में विश्व की 17.5 प्रतिशत आबादी रहती है, जबकि तेल और गैस का केवल 0.8 प्रतिशत भंडार ही उपलब्ध हैं। विश्व के कुल जल संसाधनों में भारत की हिस्सेदारी महज 4. 3 प्रतिशत है। इस संबंध में चीन की स्थिति अपेक्षाकृत बेहतर है। इसके शिनजियांग प्रांत में जल प्रचुरता में उपलब्ध है। चीन में विश्व की 19 प्रतिशत आबादी है, जबकि इसके पास 6.6 प्रतिशत जल संसाधन हैं।

एशिया में प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहण और इनमें आ रही तेज गिरावट से पर्यावरणीय संकट खड़ा हो गया है। इसी संकट के कारण क्षेत्रीय जलवायु परिवर्तन में तेजी देखने को मिल रही है। एशिया तीन संकटों से घिरा हुआ है – संसाधनों का संकट, पर्यावरण का संकट और जलवायु परिवर्तन का संकट। ये तीनों परस्पर संबद्ध हैं और क्षेत्र के आर्थिक, सामरिक, सामाजिक और पारिस्थितिकीय भविष्य को प्रभावित करते हैं। वायु प्रदूषण से लेकर प्रमुख शहरों में

जल की मांग और आपूर्ति में बढ़ता अंतर एशिया के संसाधनों के तनाव को बराबर बढ़ा रहा है। एशिया जीवाश्म ईंधन, कच्चा खनिज और लकड़ी तो आयात कर सकता है, लेकिन सामाजिक आर्थिक विकास के सबसे जरूरी उपादान– जल का आयात नहीं कर सकता। समुद्र के रास्ते पानी का आयात कठिन और काफी महंगा सौदा है। अफसोस की बात है कि विश्व में सबसे अधिक जल प्रदूषण और तंगी इसी क्षेत्र में है।

एशियाई अर्थव्यवस्था खाद्य सुरक्षा की नई चुनौती से भी जूझ रही है। मांग के अनुपात में कृषि उपज और खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि नहीं हो रही है। बढ़ती संपन्नता और खानपान की बदलती आदतों के कारण खाद्य पदार्थों की मांग बराबर बढ़ रही है और क्षेत्र के सामने बड़ी चुनौती पेश कर रही है।

प्राकृतिक संसाधनों पर प्रतिस्पर्धा अलग–अलग मुद्दों पर बढ़ती जा रही है, जैसे तेल और गैस पाइपलाइन का स्थान। चीन पेट्रोलियम पदार्थ की आपूर्ति पाइपलाइन के माध्यम से करने पर जोर दे रहा है।

कजाकिस्तान और रूस से आपूर्ति

पाइपलाइन के माध्यम से होने लगी है। अन्य प्रमुख अर्थव्यवस्थाएं जैसे जापान, भारत और दक्षिण कोरिया को यह सुविधा उपलब्ध नहीं है। इसका बड़ा कारण तेल संपन्न देशों से इनकी सीमा का लगा न होना है।

तेल की आपूर्ति के लिए ये अर्थव्यवस्थाएं मुख्यतः फारस की खाड़ी क्षेत्र से होकर आने वाले जहाजों पर निर्भर हैं। संसाधनों का भूखा चीन इस आशंका से डरा हुआ है कि समुद्र के रास्ते होने वाली पेट्रोलियम पदार्थ की आपूर्ति को बाधित करके उसे विश्व महाशक्ति बंधक बना सकती है। इसीलिए बीजिंग ने तेल के विशाल भंडार जमा कर लिए हैं और दक्षिण एशिया में दो सामरिक ऊर्जा गलियारे की योजना पर काम कर रहा है। ये गलियारे भारत के दोनों ओर से गुजरते हैं। इनके माध्यम से वह फारस की खाड़ी और अफ्रीका से आने वाले तेल व गैस की आपूर्ति सुचारू रखना चाहता है। उसका लक्ष्य इन संसाधनों के परिवहन पर खर्च होने वाले भाड़े को कम करना और अमेरिकी दबदबे वाले समुद्री मार्गों से बचना है।

इसी प्रकार का एक गलियारा बंगाल की खाड़ी से 800 किलोमीटर दूरी से होकर गुजरता है। यह बर्मा के पास से होता हुआ दक्षिण चीन तक पहुंचता है। चीन की गैस आपूर्ति की पहली पाइपलाइन पर काम इस साल के अंत तक पूरा होने की उम्मीद है। इस गलियारे में सुपरफास्ट रेलमार्ग और बर्मा के तट से चीन के युनान प्रांत तक हाईवे का निर्माण भी शामिल है। इनके पूरा होते ही इतिहास में पहली बार चीन की पहुंच दक्षिण–पश्चिम समुद्री तट तक हो जाएगी।

दूसरा गलियारा पाकिस्तान में चीन द्वारा निर्मित ग्वादर बंदरगाह से काराकोरम पर्वत श्रृंखला से होते हुए चीन के शिनजियांग प्रांत तक पहुंचता है। हालांकि पाकिस्तान के बलूचिस्तान प्रांत में उपद्रव की वजह से इस गलियारे का निर्माण कार्य अभी शुरू नहीं हो पाया है, किंतु पिछले दिनों पाकिस्तान द्वारा ग्वादर बंदरगाह का नियंत्रण चीन को सौंप देने के बाद बीजिंग द्वारा वहां नौसैनिक अड्डा बनाने का मार्ग प्रशस्त हो गया है।

संसाधनों पर पकड़ युद्ध और शांति दोनों काल में अहम है। एशिया में प्राकृतिक संसाधनों की भू–राजनीतिक स्थिति दिन पर दिन गंभीर होती जा रही है। ऊर्जा आयात पर बढ़ती निर्भरता के परिणामस्वरूप नौसैनिक शक्ति पर जोर बढ़ता जा रहा है। इससे समुद्री मार्गों की सुरक्षा और आपूर्ति के बाधित होने का खतरा भी बढ़ रहा है। आज प्राकृतिक संसाधन विभिन्न एशियाई टकरावों की धुरी बने हुए हैं। ईस्ट चाइना सी में विवादित द्वीप वर्तमान चीन–जापान तनावों का कारण हैं, जबकि इनका क्षेत्रफल महज सात वर्ग किलोमीटर ही है। दरअसल इनकी अहमियत इनके आसपास समुद्री क्षेत्र में पेट्रोलियम भंडारों की प्रचुरता में छिपी है। इसी प्रकार दक्षिण चीन सागर में स्थित कुछ छोटे द्वीपों को लेकर भी चीन का पड़ोसी देशों के साथ विवाद चल रहा है।

संसाधनों की यह हवस एशिया की सुरक्षा को खतरे में डाल रही है। संसाधनों की होड़ के कारण एशिया को अस्थिरता और असुरक्षा से बचाने का एक ही रास्ता रह गया है कि इसके लिए सक्षम संस्थानों का गठन किया जाए। इन संस्थानों के मापदंडों के आधार पर संबंधित पक्षों में मतभेद दूर करते हुए सहयोग की भावना का संचार किया जा सकता है।

संसाधनों की यह हवस एशिया की सुरक्षा को खतरे में डाल रही है। संसाधनों की होड़ के कारण एशिया को अस्थिरता और असुरक्षा से बचाने का एक ही रास्ता रह गया है कि इसके लिए सक्षम संस्थानों का गठन किया जाए। इन संस्थानों के मापदंडों के आधार पर संबंधित पक्षों में मतभेद दूर करते हुए सहयोग की भावना का संचार किया जा सकता है।

अफसोस की बात है कि इस दिशा में कोई पहल नहीं हो रही है। उदाहरण के लिए दो या अधिक देशों से होकर बहने वाले एशिया की 57 नदियों में से 53 नदियों के जल बंटवारे पर कोई सहमति नहीं बनी है।

इस सच्चाई को अधिकांश एशियाई देशों के तनावपूर्ण संबंधों के परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है। अफ्रीका के बाद एशिया ही ऐसा महाद्वीप है, जहां क्षेत्रीय एकीकरण को मजबूती नहीं मिली है। इसका प्रमुख कारण यह है कि राजनीतिक और सांस्कृतिक विविधता के कारण बाध्यकारी संस्थानों का गठन नहीं हो सका है।

जिनका यह मानना है कि एशिया का उत्कर्ष अब रुक पाना संभव नहीं है और पश्चिम का पतन अपरिहार्य है, उन्हें रुक कर विचार करना चाहिए कि क्या इन संसाधनों की चुनौतियों से पार पाए बिना एशिया की अर्थव्यवस्थाएं प्रभावी प्रदर्शन कर सकती हैं? ❑

यह शिक्षा मिल भी जाए तो . .

जिस बाजारवादी व्यवस्था को देश ने अपनाया है, उसके अनुरूप शिक्षा का तो उन स्कूलों में सवाल ही नहीं पैदा होता। अगर शिक्षा का उद्देश्य रोजगार नहीं है, केवल अक्षरज्ञान है तो फिर चौदह साल तक बच्चे को स्कूल में बंद करने में निर्धन मजदूर और किसान को क्या मिलेगा? जो संपन्न किसान हैं या ग्रामीण ठेकेदार आदि हैं, वे अपने बच्चों को शिक्षा देना तो चाहते हैं, लेकिन सरकारी स्कूलों में नहीं, निजी पब्लिक स्कूलों में। इस शिक्षा नीति से नगरों में ही नहीं, गांवों में भी दो तरह का भारत विकसित होगा – एक जो पब्लिक स्कूलों में पढ़ने वाला, दूसरा अपढ़ या नाममात्र का शिक्षित।

■ जवाहरलाल कौल

किसी प्रगतिशील कानून को पारित करके हम खुश होना चाहें तो कह सकते हैं कि भारत शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाने वाला दुनिया का 135वां देश बन गया है। अगर सचमुच गिरेबान में झांक कर विवेचना करने की कोशिश करें तो कहना होगा कि हम आजादी के इतने साल बाद भी इस काम में दुनिया के 135 देशों के पीछे खड़े हैं। देर से ही सही अगर चेते होते, सही कानून बनाकर उसे सही तरीके से अपनाने का संकल्प होता तो शायद इस खाई को हम जल्द ही पार कर जाते। लेकिन यह दावा करना भी मुश्किल है।

प्रगतिशील कानूनों की ही तरह कानून भी इतनी सारी बैसाखियों के सहारे चल रहा है कि तीन साल पूरे होने पर भी नहीं लगता कि कुछ चला भी है या नहीं। कानून तो अगस्त 2009 में पारित हुआ था और उसके अगले साल एक अप्रैल को लागू कर दिया गया। 23 साल पहले राजीव गांधी सरकार ने एक शिक्षा आयोग बनाया था। उद्देश्य था कि देश में शिक्षा के सही स्वरूप की एक रूपरेखा बनाई जाए। इस पर बहस हुई और 1990 में आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक संशोधित शिक्षा नीति बनाई गई।

इसमें पूरे देश के लिए एक सामान्य शिक्षा प्रणाली बनाने की सिफारिश की गई थी। लेकिन इस सिफारिश को किनारे रख कर यूपीए सरकार ने नई नीति घोषित की है, जिसे शिक्षा के अधिकार के रूप में पेश किया गया। इसके एक साल पूरा होने पर केंद्रीय मानव संसाधन मंत्रालय ने जो रपट पेश की, उसके अनुसार अभी भी यानी 2011 में 81 लाख बच्चे स्कूल नहीं जाते। अगर

यह सही होता तो इसे भारतीय स्थितियों में बुरी प्रगति नहीं माना जा सकता था। लेकिन इस रपट के छपते ही इसको चुनौति दी गई और सुप्रीम कोर्ट को भी हस्तक्षेप करना पड़ा।

इस विधेयक के अनुसार 6 साल से लेकर 14 साल तक के सभी बच्चों को शिक्षा पाने का अधिकार है और इसे पूरा करने के लिए सभी सरकारी स्कूलों को जिम्मेदारी दी गई है कि वे अपने इलाके के सभी बच्चों को स्कूलों में भर्ती करें ताकि यह पता चले कि बीच में पढ़ाई छोड़ने के कारण क्या है।

गैरसरकारी स्कूलों को आदेश दिया गया है कि वे कम से कम 25 प्रतिशत गरीब बच्चों को दाखिला दें, जिसका पालन आज तक न हीं हो रहा है। अनुमान लगाया गया है कि इस काम के लिए 231000 करोड़ रुपए की लागत आएगी, जो पांच साल के लिए आवश्यक होगी।

इसमें पहले यह व्यवस्था रखी गई थी कि इस व्यय का 45 प्रतिशत राज्य और बाकी केंद्र सरकार व्यय करेगी। लेकिन फिर इसमें संशोधन किया गया, जिसके अनुसार केंद्र अब लगभग 70 प्रतिशत व्यय वहन करेगा और राज्यों को अपने वर्तमान खर्च में अधिक वृद्धि नहीं करनी पड़ेगी।

सरकार को एक और व्यय करना होगा। जो ग्रामीण गरीब माता–पिता अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों में नहीं पढ़ाना चाहते, वे उन्हें निजी स्कूलों में दाखिला दिला सकते हैं और इसके लिए उन्हें अतिरिक्त फीस देनी होगी, इसकी भरपाई सरकार करेगी। यह पैसा निजी स्कूल को मिलेगा, वह भी वाउचर के माध्यम से। यानी अभिभावक के पास ऐसे वाउचर होंगे, जिनके आधार पर वे अपने बच्चों को निजी स्कूलों में पढ़ा सकता है।

शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने और हर बच्चे को अपनी रुचि के अनुसार शिक्षा पाने के अधिकार के लिए ये सारा ताम–झाम अच्छा लगता है लेकिन कुछ गहराई से देखने पर बस ताम–झाम ही लगता है यह।

कुछ गहरे जाएं तो पता चलेगा कि यह कानून हमारे शिक्षा तंत्र और शिक्षा की गुणवत्ता की पोल खोलता है। इसमें सारी जिम्मेदारी सरकारी स्कूलों पर डाली गई है। पहले तो सरकारी स्कूलों की संख्या बढ़ाने के बदले घट रही है, क्योंकि राज्य सरकारों ने इस क्षेत्र से हाथ खींचना आरंभ किया है। आर्थिक कारण तो है ही लेकिन यह भी कारण है कि सरकारी स्कूलों में शिक्षा दी जाती है, उसका बाजार भाव है ही नहीं, यानी उससे बच्चों को तो चपरासी की नौकरी भी मिलने की उम्मीद नहीं होती है।

जिस बाजारवादी व्यवस्था को देश ने अपनाया है, उसके अनुरूप शिक्षा का तो उन स्कूलों में सवाल ही नहीं पैदा होता। अगर शिक्षा का उद्देश्य रोजगार नहीं है, केवल अक्षरज्ञान है तो फिर चौदह साल तक बच्चे को स्कूल में बंद करने में निर्धन मजदूर और किसान को क्या मिलेगा? जो संपन्न किसान हैं या ग्रामीण ठेकेदार आदि हैं, वे अपने बच्चों को शिक्षा देना तो चाहते हैं, लेकिन सरकारी स्कूलों में नहीं, निजी पब्लिक स्कूलों में। इस शिक्षा नीति से नगरों में ही नहीं, गांवों में भी दो तरह का भारत विकसित होगा – एक जो पब्लिक स्कूलों में पढ़ने वाला, दूसरा अपढ़ या नाममात्र का शिक्षित।

इससे यह सवाल भी उठता है कि आखिर सरकारी स्कूलों में सही पढ़ाई

शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने और हर बच्चे को अपनी रुचि के अनुसार शिक्षा पाने के अधिकार के लिए ये सारा ताम–झाम अच्छा लगता है लेकिन कुछ गहराई से देखने पर बस ताम–झाम ही लगता है यह। कुछ गहरे जाएं तो पता चलेगा कि यह कानून हमारे शिक्षा तंत्र और शिक्षा की गुणवत्ता की पोल खोलता है।

क्यों नहीं होती, उसका स्तर इतना नीचे क्यों है? या तो सरकार, चाहे राज्य सरकारें हों या केंद्र सरकार, यह नहीं चाहती कि सब बच्चे पढ़ें और अच्छी नौकरियों के दावेदार बनें।

बाजारवाद का तकाजा है कि हर आदमी अपनी शिक्षा का पैसा दे और पब्लिक स्कूलों में जाए। ऐसी हालत में सरकार को यह तो घोषित करना चाहिए कि शिक्षा देने का सरकार का कोई दायित्व नहीं और स्कूल चलाने की अपनी जिम्मेदारी से मुक्ति पानी चाहिए।

केंद्र की राजनीति करने वाले अकसर सारा दोष राज्य सरकारों के सिर डालते हैं। यह किसी हद तक सच भी है। केंद्र सरकार तो खास बच्चों के लिए केंद्रीय विद्यालय, आदर्श विद्यालय और संस्कृति स्कूल जैसे स्कूल चलाती है और उसी तरह के मानव संसाधन विकसित करती है, जिसकी उसको और बाजार को आवश्यकता है। गरीब बच्चों की राज्य सरकारें जानें।

दिलचस्प बात यह है कि सरकार ने बड़े लच्छेदार शब्दों में शिक्षा के उद्देश्यों पर अपना मत व्यक्त किया हो लेकिन यह नहीं बताया गया है कि स्कूली शिक्षा का लक्ष्य रोजगार पाना है कि नहीं। अगर है तो चौदह वर्ष की सीमा का क्या अर्थ होता है। अगर चौदह वर्ष की उम्र तक गरीब बच्चा दसवीं पास करता है तो उसे कौन सी नौकरी मिलेगी। जब इस बात की आलोचना होने लगी तो सीमा बढ़ाकर ग्यारहवीं कक्षा कर दिया गया, जो आज के बाजार के अनुसार इसलिए अनुपयोगी है क्योंकि बारहवीं कक्षा पास किए बिना तो चतुर्थ वर्ग की नौकरी के लिए आवेदन स्वीकार नहीं किया जाता।

अगर आचार्य राममूर्ति की बात मानकर सरकार ने सामान्य स्कूली शिक्षा के बदले तकनीकी शिक्षा के लिए सुविधाएं देने का इरादा व्यक्त किया होता तो शायद दसवीं पास की भी बाजार में कोई औकात होती। फिर यह भी पूछा जा सकता है कि 6 साल से नीचे के बच्चों का क्या होगा? संपन्न लोग उन्हें निजी नर्सरी स्कूलों में डालते हैं। सरकार ने एक ओर तो गैर मान्यता प्राप्त स्कूलों को चलाने पर प्रतिबंध लगाया है, दूसरी ओर 6 साल तक के बच्चों को किसी प्रकार की शिक्षा से वंचित रखा है। यह समस्या सबसे अधिक उन गरीब परिवारों की है, जिनमें पति–पत्नी दोनों काम पर निकलते हैं और बच्चे झूले में डोलते हैं। कहने को हमारे यहां आंगवाड़ी और बहुत सी ऐसी ही संस्थाएं हैं, लेकिन जमीन पर देखें तो वे ऊंट के मुंह में जीरा ही हैं। ❑

रपट

देश की वर्तमान परिस्थितियों पर सर कार्यवाह भय्या जी जोशी (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ) का वक्तव्य

आज स्वावलम्बी आर्थिक विकास के लिए, वैकल्पिक आर्थिक पुनर्रचना की पहल की अविलम्ब आवश्यकता है

सरकार की अदूरदर्शितापूर्ण नीतियों से बढ़ते आर्थिक संकट और कृषि, लघु उद्योग व अन्य रोजगार आधारित क्षेत्रों की बढ़ती उपेक्षा आज देश के लिए चिन्ता का कारण बन कर उभर रही है। देश के उत्पादक उद्योगों की वृद्धि दर आज स्वाधीनता के बाद सबसे न्यूनतम स्तर पर पहुँच गयी है। इस गिरावट से फैलती बेरोजगारी, निरंतर बढ़ रही महंगाई, विदेश व्यापार में बढ़ता घाटा और देश के उद्योग, व्यापार व वाणिज्य पर विदेशी कम्पनियों का बढ़ता अधिपत्य आदि आज देश के लिए गम्भीर आर्थिक सकंट व पराश्रयता का कारण सिद्ध हो रहे हैं। साथ ही बढ़ते राजकोषीय संकट से, कृषि सहित रक्षा, विकास व लोक कल्याण के लिए संसाधनों का बढ़ता अभाव भी आज गम्भीर रूप से चिंतनीय है। कृषि की उपेक्षा से किसानों द्वारा आत्महत्या की बढ़ती घटनाओं, अधिकाधिक किसानों का अनुबंध पर कृषि के लिए बाध्य होने और सरकार की भू–अधिग्रहण की विवेकहीन हठधर्मिता आदि से आज करोड़ों किसानों का जीवन संकटापन्न होने के साथ ही, देश की खाद्य सुरक्षा भी गम्भीर रूप से प्रभावित हो रही है। ऐसे में, विविध बहुपक्षीय व्यापारिक समझौते एवं मुक्त व्यापार समझौते भी अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में सरकार को देश हित के अनुरूप निर्णय करने के विरूद्ध बाध्य कर, विकल्प हीनता की स्थिति खड़ी कर रहे हैं, जो अत्यन्त गंभीर चिन्ता का विषय है। ऐसे में आज स्वावलम्बी आर्थिक विकास के लिए, वैकल्पिक आर्थिक पुनर्रचना की पहल की अविलम्ब आवश्यकता है।

आज गंगा–यमुना जैसी पवित्र नदियाँ जहाँ हमारी अगाध श्रद्धा का केन्द्र हैं, वहीं वे करोड़ों लोगों के जीवन का आधार होने के साथ–साथ, देश के बहुत बड़े क्षेत्र के पर्यावरणीय तंत्र की भी मूलाधार हैं। इन नदियों के प्रवाह को अवरूद्ध करने के सरकारों के प्रयास, उन्हें प्रदूषण मुक्त रखने के प्रति उपेक्षा एवं उनकी रक्षार्थ चल रहे आन्दोलनों की भावना को न समझते हुए उनकी उपेक्षा भी गम्भीर रूप से चिन्तनीय है। संघ इन सभी जन आन्दोलनों का स्वागत करता है।

कावेरी जैसे नदी जल विवाद भी अत्यन्त चिन्ताजनक हैं। राज्यों के बीच नदी जल विभाजन व्यापक जन हित में, न्याय व सौहार्द पूर्वक होना आवश्यक है। इसी प्रकार प्राचीन रामसेतु, जो करोड़ों हिन्दुओं की श्रद्धा का केन्द्र होने के साथ–साथ, वहाँ पर विद्यमान थोरियम के दुर्लभ भण्डारों को सुरक्षित रखने में भी प्रभावी सिद्ध हो रहा है। उसे तोड़ कर ही सेतु–समुद्रम योजना को पूरा करने की सरकार की हठधर्मिता, देश की जनता के लिए असह्य है। पूर्व में भी वहां से परिवहन नहर निकालने हेतु सरकार द्वारा उसे तोडने के प्रयास आरंभ करने पर, उसे राम भक्तों के प्रबल विरोध के आगे झुकना पडा है। आज शासन द्वारा पचौरी समिति के द्वारा सुझाये वैकल्पिक मार्ग को अपनाने के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देने के शपथ पत्र से पुनः उसकी नीयत पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। इसलिए हम सरकार से अनुरोध करते हैं कि, जन भावनाओं का सम्मान करते हुए उसे तोड़ने का दुस्साहस न करे। अन्यथा उसे पुनः प्रबल जनाक्रोश का सामना करना पड़ेगा। ऐसे सभी सामयिक घटनाक्रमों के प्रति सरकार को जन भावनाओं को ध्यान में रखते हुए देश हित में व्यवहार करना चाहिए। ❑

आज शिक्षा के नाम पर जो शिक्षा हमें उपलब्ध कराई जा रही है वह हमारी पीढ़ी को भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ने की शक्ति नहीं प्रदान करा पा रही है : सरयू

स्वदेशी दुनिया के देशों के साथ मिलकर लड़ने वाला सिद्धांत है यह दुनियां से अलग सिद्धांत नही है। दुनिया के 202 देशों के 99 प्रतिशत लोगों की लड़ाई लड़ने वाला संगठन है स्वदेशी। – कश्मीरी लाल जी

स्वदेशी जागरण मंच (जमशेदपुर) का 13वां जिला सम्मेलन बीते सप्ताह चेम्बर भवन में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन मुख्य अतिथि स्वदेशी जागरण मंच के राष्ट्रीय संगठक श्री कश्मीरी लाल, विशिष्ट अतिथि श्री शेखर डे, पूर्वांचल संघर्ष वाहिनी प्रमुख बंदेशंकर सिंह राष्ट्रीय परिषद सदस्य मनोज कुमार सिंह और डा. अनिल राय ने संयुक्त रूप से दीप प्रज्जवलन कर किया।

अपने संबोधन में श्री कश्मीरी लाल ने कहा की जमशेद जी टाटा स्वदेशी विचार के प्रमुख चिन्तक थे और उनके नाम से बसे इस नगर में स्वदेशी का जिला सम्मेलन हो रहा है इसलिए हम सबसे पहले स्व. टाटा को नमन करते है। उन्होंने आगे कहा की स्वामी विवेकानन्द विश्व के महान आर्थिक चिंतक थे और उनके जन्म के 150वीं वर्षगाठ के वर्ष में आयोजित यह जिला सम्मेलन और अधिक महत्व रखता है।

स्वदेशी दुनिया के देशों के साथ मिलकर लड़ने वाला सिद्धांत है यह दुनिया से अलग सिद्धांत नही है। दुनियां के 202 देशों के 99 प्रतिशत लोगों की लड़ाई लड़ने वाला संगठन है स्वदेशी। दूसरे शब्दों में कहे तो पुरी दुनिया में कारपोरेट के अन्याय के खिलाफ लड़ने वाला संगठन का नाम है स्वदेशी जागरण मंच। देश के बड़े कारपोरेट घराने और देश में शासन करने वाले लोग एफडीआई को कामधेनु गाय समझ रहे हैं जिनके आने से देश की सारी गरीबी दूर हो जायेगी जबकी हकीकत ऐसी नहीं है।

उन्होंने देश के विकास और समृद्धि के लिए स्वदेशी पद्धति अपनाने पर बल दिया। जिसमें विकेन्द्रीकरण व्यवस्था, ग्रामीण आधारीत विकास, पर्यावरण की रक्षा करने की पद्धति और गरीबों के कल्यानार्थ कार्य योजना का निमार्ण करने आदि पर बल दिया।

श्री शेखर डे ने कहा की स्वदेशी जागरण मंच राष्ट्रवादियों का संगठन है और इसके माध्यम से स्वदेशी विचार धारा को लोगों में भरने का प्रयास स्वदेशी जागरण मंच कर रही है। कार्यक्रम के पहले सत्र का विषय प्रवेश राजकुमार साव स्वागत भाषण सीपी सिंह संचालन पंकज सिंह और धन्यवाद ज्ञापन विजय सिंह ने किया।

कार्यक्रम के दूसरे सत्र में भ्रष्टाचार, कालाधन, चीन की चुनौतियां और एफडीआई जैसे मुद्दों पर चर्चा हुई । इस सत्र की अध्यक्षता श्री सरयू राय ने किया। श्री सरयू जी ने कहा की इस देश का विकास इसके विशेषताओं के आधार पर होगा। आज चाहे सत्ता में बैठे लोग हों चाहे विपक्ष के लोग हो भ्रष्टाचार के खिलाफ समुचित ढंग से क्यों नहीं लड़ रहे है यह सोचने का विषय है। जितने भी दल है सत्ता और विपक्ष में उनमें केवल 19–20 का अंतर है। आज शिक्षा के नाम पर जो

शिक्षा हमें उपलब्ध कराई जा रही है वह हमारी पीढ़ी को भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ने की शक्ति नहीं प्रदान करा पा रही है।

हमें सरकार के अन्दर बैठे लोगों के उपर जन दबाव बना कर और बड़े लोगों के अन्दर से भ्रष्टाचार का नाश करना पड़ेगा।

एफडीआई पर श्री बंदेशंकर सिंह कालाधन पर श्री कौशल किशोर चीन की चुनौतियों के बारे में श्री मनोज कुमार सिंह ने अपने विचार रखे।

बंदेशंकर जी ने कहा का जिस तरह ईस्ट इंडिया कम्पनी व्यापार करने आई थी और पूरे भारत वर्ष पर अपना कब्जा जमा लिया था उसी प्रकार ये बहुराष्ट्रीय बड़ी कम्पनियां काम करेगी देश प्रर प्रत्यक्ष रूप से भले न हो परोक्ष रूप से शासन करने का कार्य करेगी।

श्री मनोज सिंह ने कहा की 1962 के लड़ाई में तो चीन हमसे 38 हजार वर्ग किलोमीटर ज़मीन छीना ही है आज फिर से वह भारत को चारों तरफ से घेरने का प्रयास कर रहा है। चाहे पाकिस्तान स्थित कश्मीर में कैरिडोर निर्माण करने की बात हो या अरूणाचल में हेलीपैड बनाने कि बात हो या ब्रहमपुत्र को बांध कर उसके पानी को चीन में ले जाने की बात हो चीन ये सारे कार्य धड़ल्ले से कर रहा है।

दूसरी तरफ आतंकवाद और नक्स्लवाद के माध्यम से हमारे घरों में हिंसा फैलाने की बात हो या फिर अपने उत्पाद के माध्यम से हमारे आर्थिक व्यवस्था पर हमला हो।

कार्यक्रम का दूसरे सत्र का संचालन राकेश पाण्डेय ने किया। कार्यक्रम के तीसरे सत्र में स्वदेशी चिकित्सा पद्धति के ऊपर चर्चा हुई जिसमें आयुर्वेद चिकित्सा पर डॉ. रत्नावली पाठक, योग प्रणाम पद्धति पर अरविन्द प्रसाद, यज्ञ चिकित्सा पद्धति पर रामा कान्त प्रसाद ने अपने विचार रखे और इनका उपयोग और उसके लाभ के बारे में बताया।

कार्यक्रम के अंतिम सत्र में स्थानीय समस्यायों के ऊपर लोगों ने चर्चा की जिसमें प्रमुख रूप से जल संकट और आत्महत्या की बढ़ती प्रवृति पर चर्चा हुई। कुछ लोगों को संगठनात्मक दायित्व भी दिया गया। जिसके तहत श्री सत्यनारायण मिश्र को जिला संपर्क प्रमुख, मो. अमान को जिला कार्यसमिति सदस्य, राघवेन्द्र सिंह को साकची नगर संयोलक, ललित मेश्राम को टेल्को नगर संयोजक, संजय पाठक को गोविन्दपुर नगर संयोजक, प्रमोद कुमार शर्मा को मानगो नगर संयोजक, अंशुमान चौबे को सितारामडेरा नगर संयोजक, सुमित कुमार को परसुडिह नगर सह संयोजक, श्रीमति कृष्णा राव को जिला सह महिला संयोजक और श्रीमति चंदना बनर्जी को जिला सह महिला संयोजक, मीना देबी को बिरसा नगर महिला समिति के संयोजक, कलावती देबी को गोलमुरी नगर महिला संयोजक बनाया गया।

कार्यक्रम में प्रमुख रूप से आर. दयाल, मुरलीधर केड़िया, हरिवल्लभ सिंह आरसी, जवाहर लाल शर्मा, मोहन लाल अग्रवाल, अभय सिंह, सतीश सिंह, संजित प्रंमाणिक, रौशन सिंह राकेश सिंह, गुरजीत सिंह अरविन्द तिवारी, अभिषेक बजाज, विजय कुमार सिंह, सतिस शर्मा, मुरलीधर वर्णवाल, राजीव कुमार अमिताभ सेनापति, सोनु ठाकुर, सुखदेव सिंह, काजु सांडिल, राजपति देबी, रीता लाल, घनश्याम दास मुकेश कुमार, देबी प्रसाद सहीत अन्य कार्यकर्ता उपस्थित थे। ❑

आज चाहे सत्ता में बैठे लोग हों चाहे विपक्ष के लोग हो भ्रष्टाचार के खिलाफ समुचित ढंग से क्यों नहीं लड़ रहे है यह सोचने का विषय है। जितने भी दल है सत्ता और विपक्ष में उनमें केवल 19–20 का अंतर है। आज शिक्षा के नाम पर जो शिक्षा हमें उपलब्ध कराई जा रही है वह हमारी पीढ़ी को भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ने की शक्ति नहीं प्रदान करा पा रही है।